विश्राम

[नौकरानी, श्याम की बुआ, शशि, विश्राम]

लेखक

साने गुरु जी एम० ए०

अनुवादक

श्री बाबूराव कुमठेकर

मूल्य [illegible]॥।)

समर्पण

उन बालकों को जिनके अरमान आसमान छूते हैं

परिस्थिति पाताल में दबोचती है

जिससे

उनके जीवन सुमन खिलने के पहले ही

मुर्झा जाते हैं।

अनुवादक

प्रार्थना

इसमें पू० गुरूजी की चार कहानियाँ हैं। मराठी में इसके चार संस्करण हुए हैं। यह उन कहानियों का स्वतंत्र अनुवाद है।

पहली कहानी है "नौकरानी।" इस कहानी के बारे में लिखते समय पू० गुरूजी लिखते हैं" इसमें तनिक भी अतिशयोक्ति नहीं है। मैं जानता हूँ महाराष्ट्र में ऐसी घटनाएं घटी हैं।"

किसी भाषा का अर्थ उस भाषा का कोष, व्याकरण या उपन्यास की कुछ पुस्तकें नहीं हैं, मगर उस भाषा को बोलने वालों के भाव, विचार, विकार, संस्कार तथा आशा आकांक्षाएं हैं। बचपन से ही जब कि अपनी संस्कृति के संस्कार पक्के नहीं होते, दूसरी किसी भाषा का अध्ययन करना अनजान में उस संस्कृति में विलीन हो जाना है, जिस संस्कृति की भाषा का अध्ययन किया जाता है। यही करण है जब किसी जाति की क्रांति का इतिहास लिखा जाता है, किसी जाति के उत्थान या पतन का इतिहास लिखा जाता है, उस इतिहास में भाषा के बारे में कुछ पृष्ठ अवश्य रहते हैं।

हिंदुस्तान में अंग्रेज़ों ने अपना राज बढ़ाने तथा कायम रखने के लिये अंग्रेज़ी का प्रचार किया। हमारे हिंदुस्तानी बालक बचपन से उसको सीखने लगे। इसका नतीजा यह हुआ कि हम हर एक बात की ओर अंग्रेजी शराफत का चश्मा लगा कर देखने लगे। हमें उस शराफत की बदहज़मी हुई। पिता की जगह डेडी और माता की जगह मामी आई। अपने माता-पिता तथा देश-धर्म हमें हेय लगने लगा, तुच्छ लगने लगा, हम लिबास से ही नहीं दिल से भी अंग्रेज़ बने। हमारे हाईस्कूल, कालेज और विश्वविद्यालयों में से "अंग्रेज़ दिल के हिंदुस्तानी" निकलने लगे।

पू० गुरूजी ने नौकरानी में यही बात अत्यन्त मार्मिकता के साथ दिखाई है। उसमें दो संस्कृतियों के संघर्ष का सुंदरतम दर्शन होता है। साथ साथ महाराष्ट्र के कोंकण विभाग की संस्कृति आचार-विचार का भी सुंदर सजीव चित्र खींचा गया है। मातृ प्रेम का त्याग और माहात्म का भी सुखद दर्शन होता है।

दूसरी कहानी है "शाम की बुवा!" यह एक शुद्ध चित्र है। "शाम की आई।" "शाम" "शाम की आस्था" वगैरह महाराष्ट्रीय साहित्य के पवित्र ग्रंथ हैं। उसमें पू० गुरूजी के हृदय की वेदना और यातनाओं का दर्शन होता है। उनके हृदय काशकी विशालता और मानस सरोवर की प्रशांत गहराई का दर्शन होता है। उसको दूर से प्रणाम मात्र किया जा सकता है। उस अगाध प्रेम का वर्णन या आलोचना करना उसकी अवहेलना करना है। वह पू० गुरूजी का अपना अनुभव है।

तीसरी कहानी है "शशि!" इसके अनेक पहलू हो सकते हैं। आज कल "हमारे घर और पाठशालाएं निर्जीवों की ओर से सजीवों के लिए बनाए गये कब्रस्थान हुए हैं।" वह आसमान में उड़ने वाली उन बाल आत्माओं को अपने सड़ियल विचारों की बेड़ियों से जकड़ना चाहते हैं। हमारी शिक्षा एक प्रकार से ऋणात्मक बनी हुई है।

हम बालकों को बनाना चाहते हैं। कोई डाक्टर बनाना चाहते हैं तो कोई वकील, कोई व्यापारी बनाना चाहता है कोई और कुछ! हम यह भूल जाते हैं शिक्षा का उद्देश किसी को बनाना नहीं पर किसी के विकाश में जो स्वभावानुकूल होता है सहायता करना मात्र है। उनके विकाश में मदद पहुँचाना है।

और आज कल हमारी शिक्षा, दीक्षा, कला बहादुरी सब कुछ महज जबानी जमाखर्च हुआ है। रोज के व्यवहार में कुछ नहीं आता गालियाँ न बकने की शिक्षा देने वाला शिक्षक......गालियाँ देने की सजा देते देते......खुद गालियाँ देते हैं।

यही बात माँ बाप की भी है। जिन बुरी बातों के लिए माँ बाप बालकों को सजा देते हैं मारते-पीटते हैं, वही बातें वे स्वयं करते हैं। इतना ही नहीं बालक अपने बुजुर्गों तथा शिक्षकों का अनुकरण करने की भावना से उन बुरी बातों को करते हैं। इन बातों का बालकों पर क्या असर पड़ेगा? अपने माता-पिता तथा शिक्षकों के बारे में बालक क्या सोचेंगे? समाज को इन सभी बातों का विचार करना है। शशि इस प्रकार के विचारों को चालना देता है।

इसका दूसरा पहलू है हिंदू-मुसलमान समस्या। मनुष्य जो देता है··· या जो बोता है ······वह पाता है। किसी को बदमाश, घातकी, पातकी कहना और समझना उसको ऐसे बनाना है। विचारों की भी शक्ति होती है। मनुष्य पर जितना विश्वास रखा जाता है वह उतना विश्वास पात्र बनता है। अगर हिंदू मुसलमानों से नफरत करें तो मुसलमान हिंदुओं से मुहब्बत कैसे करेंगे! वही बात मुसलमानों के लिए भी लागू होती है। अगर मुसलमान हिंदुओं से मुहब्बत चाहते हैं, भलमनसाहत चाहते हैं, भाई चारा चाहते हैं तो उन्हें भी वह देना पड़ेगा नहीं तो उन्हें वह नहीं मिलेगा, नफ़रत के बदले में मुहब्बत नहीं मिलेगी, बदमाशी देकर भलमनसाहत नहीं मिलेगी।

मनुष्य के जीवन में दोनों हैं। भलाई भी है बुराई भी है। अगर हम भलाई चाहते हैं तो औरों में हमें भलाई को ही देखना होगा, दूसरों के गुणों के कण को पहाड़ बनाकर देखना होगा। गुणों को देखकर उनको प्रोत्साहन देने से ही गुणों का विश्वास होता है। दोषों को देखने दिखाने से गुणों का विकास नहीं होता।

चौथी कहानी है "विश्राम।" आज कल समाज में जो श्रमता दमता है जो तपता खपता है वह भूखों मरता है और मुफ्त खोर आलसी तकिया मसनद पर करवटें बदलकर "मज़ा मारता" है। यह परिस्थित अतीव असह्य है। इसको बदलना निहायत ज़रूरी है।

मगर कैसे बदलेंगे? इसके दो रास्ते हैं। एक रास्ते को यूरप ने

अपनाया है, वह है खून खराबी। वह अपने ज़माने की बेकारी बीमारी और भुखमरी के साथ-साथ मुफ़्तखोरी को भी खून से बहा देना चाहते हैं। कुछ साल प्रथम फ्रांस तथा रूस ने वह रास्ता अख़्तियार किया, वह कहाँ तक कामयाब हुआ यह समय ही सिद्ध करेगा। दूसरा रास्ता हिंदुस्तान अपना रहा है। हिंदुस्तान अपने ज़माने की गुलामी, बेकारी, बीमारी तथा भुखमरी को अपने पसीने से बहा देना चाहता है। एक रास्ता, नफरत, क्रोध, खून और बरबादी में से गुजरता है, दूसरा मुहब्बत, खिदमत, पसीना, आँसू, कुर्बानी और आबादी में से गुजरता है। सच्ची तथा उच्च प्रकार की कला में और कुछ हो या न हो पर उसकी कल्पना में हिम्मत तो होनी ही चाहिए। कला की कल्पना में जो हिम्मत है वही कला में सौंदर्य के रूप में झलकता है। पू० गुरूजी एक सच्चे और उच्च कृति के कलाकार हैं। वह त्याग, प्रेम और सेवा से दैत्य को देव और राक्षस को ऋषि बना देने की हिम्मत से भरी कल्पना करते हैं। उनकी कला नर को नारायण बनने को सिखाती है वानर नहीं। इसीलिए उनकी कला की कल्पना में···कला वस्तुओं में ······एक प्रकार का साहस और सहनशीलता का सातत्य दीखता है।

इन चार शब्दों के साथ साथ मुझे और एक बात कहनी है। मेरे इस भाषांतर को मेरे कितने ही बाल मित्रों ने पढ़ा है। कितनी ही देवियों ने पढ़ा है, इन कहानियों के जरिये कितने ही खानदान में मुझे भाई चारा मिला है, बहनें मिली हैं माताएँ मिली हैं, कभी कभी एक पढ़ता था आठ दस सुनते थे यहाँ तक कि मैं स्वयं उनको दूसरी बार पढ़ नहीं पाया।

इन कहानियों को पढ़कर एक बहन ने कहा "यह आज कल की हिंदी नहीं है!"

मैंने पूछा "क्या बात है?"

मुझे 'विश्राम' पढ़कर सुनाया गया। कुछ शब्द चुनकर दिखाये गये। मिसाल लेते-लेते "लेवता" शब्द दिखाया गया। और कहा कि

यह हिंदी का शब्द नहीं है।

मैंने मज़ाक में कहा "हिंदी इतनी बुढिया नहीं बनी है कि यह एक नया शब्द भी वह हजम न कर सके! अगर आप प्रेमचंद्र जी का गोदान देखेंगी तो पता चलेगा कि गोदान के प्रो० मेहता का शब्द मैंने चुराया है!"

उस बहन ने कहा प्रेमचंद जी की हिंदी आज कल की हिंदी नहीं है। उसके बाद के अनेक मिसालों से पता चला कि "आज कल की हिंदी का मतलब है संस्कृत निष्ट हिंदी" जैसे "हमारी जबान का मतलब फसीह मुहल्लाए उदू है!"

खैर; मैंने किसी निष्ठा की कसम नहीं खाई है। मेरी अपनी एक निष्ठा है। अपनी कसौटी है। मैं जो कुछ लिखता हूँ लिखकर बच्चों के हाथ में देता हूँ। उनको पढ़कर सुनाता हूँ। अगर वह उन बात को ठीक समझ पायें तो मैं ठीक हूँ। जो उनके गले नहीं उतरती वह मेरी कसौटी पर नहीं उतरती।

मैंने कुछ अपने बाल मित्रों को 'शशि' सुनाया। आधी कहानी होने के पहले उनकी आँखे भर आईं। पूरी कहानी होने तक उनको कई बार आँखें पोंछनी पड़ीं। मेरे 'शशि' ने उनके दिल की तार छेड़ दी।

'नौकरानी' पढ़ते समय भी मेरे परिवार की माँ बहनों को आँखें पोंछनी पड़ती थीं। मेरे लिखे हुए कागज हाथ से नीचे रखकर अपनी उछलने वाली भावनाओं को ज़ब्त करना पड़ता था।

हम अन्य भाषा-भाषी लोग हिंदी की जो सेवा और पूजा करते हैं, प्रचार और प्रसार करने का प्रयास करते हैं वह इसीलिए कि हम अपने दिल की कसक अपने ही देश के अन्य सूबों के भाई बहनों को दिल खोलकर दिखा सकें, अपनी भावना, अपने विचार तथा विकारों की सूक्ष्मातिसूक्ष्म लहरें भी अच्छी तरह व्यक्त कर सकें उनके दिल के दुख, उनकी वेदना यातनाओं से परिचित हो सकें सबों की हँसी और आँसुओं में घुलकर चालीस करोड़ हिंदुस्तानियों का दिल एक हो।

एक दिल से, एक जबान से हम कह सकें हम सब एक हैं। इस प्रकार हम हिंदुस्तान के चालीस करोड़ दिल एक होकर अपने ज़माने की गुलामी को मिटाएं, और सारे विश्व के हृदय के साथ समरस होते हुए विश्व विकाश का एक घटक बने, यही हमारी निष्ठा हो; अगर मुझे किसी निष्ठा की कसम खानी है तो मैं संस्कृत निष्ठ हिंदी की अथवा अरबी फारसी निष्ठ हिंदुस्तानी की नहीं पर इस ध्येय निष्ठ सेवा की कसम खाऊंगा।

मैं प्रार्थना करूँगा हमारी भाषा दो दिलों को जोड़ने वाला मसाला हो। वह सर्व सुलभ हो उसमें अपने हृदय के भाव, विचार, और विकारों के सूक्ष्मातिसूक्ष्म तरंगों को व्यक्त करने की शक्ति हो। उसमें हमारे हार्दिक सद्भावों का सौंदर्य हो। इस प्रकार हमारी राष्ट्र भाषा सर्व सुलभ, सर्व शक्तिमान और सर्वांग सुंदर हो।

आखिर मैं हिंदी का एक विद्यार्थी हूँ। मेरी मातृ-भाषा हिंदी नहीं है। मुझसे गलतियाँ होना स्वभाविक है। उन गलतियों को हिंदी भाषा-भाषी साहित्यिक क्षमा करेंगे ऐसी आशा है। अन्य भाषा-भाषी भी इस बालक की नादानी को हिंदी भाषा-भाषी साहित्यिक सहानुभूति से देखने की कृपा करेंगे ऐसा विश्वास है और यही प्रार्थना है।

होलिकोत्सव : }
६—३—४७ }

अनुवादक

नौकरानी

कोंकण गोया महाराष्ट्र की शान ! वहाँ की वह सुन्दर वनश्री, श्रीफल सुपारी वगैरह के बाग, दिन रात श्रोमू श्रोमू का घोष करने वाला वह समुन्दर प्रकृति के सारे वैभव है वहाँ ! वह पहाड़ और वह नदियाँ ! पर साथ-साथ गरीबी भी है। वहाँ की गरीबी बरसाती नाले की तरह बढ़ती जाती है।

रत्नागिरी ! कोंकण का हृदय। रत्नागिरी एक जिला है। उस जिले में राजापुर एक तालुका। छोटा सा शहर है वह। वहां गंगा मैय्या आती है कभी कभी। उसी राजापुर के पास एक छोटा सा देहात है। गरीबों का देहात है। वहाँ एक भी खपरैल का पक्का मकान नहीं है। सभी घास फूस की झोपड़ियाँ। उस गाँव के इर्द गिर्द आम का जंगल है। उस जंगल में ऊषा माई का मंगल मन्दिर है। पास ही एक छोटा सा प्रवाह बहता है। उसमें सदा सर्वदा मीठा जल रहता है। गोया ऊषा माई का करुणा प्रवाह।

उस देहात में गोविन्द पंडित जी नाम के एक भिक्षुक थे। भट्ट जी थे। कोंकण में उनको भट्ट जी कहते हैं जो पूजा पाठ करते हैं। भिक्षुकी करते हैं। गोश्त वगैरह नहीं खाते। प्याज लहसुन नहीं खाते। गोविन्द पंडित जी को वहाँ गोविन्द भट्ट जी कहेंगे। गोविन्द भट्ट जी राजापुरी भट्ट जी थे। राजापुरी भट्ट जी कहते ही एक खास बात आँखों के सामने आती है। घुटनों तक की धोती। बदन में फीते से बाँधने वाली बंडी। सिर पर बड़ी भारी पगड़ी। कंधे पर अपने सामान से भरी 'पडशी' ! पडशी एक खास किस्म की थैली का नाम है। उस थैली में दोनों तरफा से चीज़ें भरी जाती हैं। और कंधे पर

आगे पीछे लटका छोड़ते हैं। और कमर में बाँधा हुआ एक शाल! इस प्रकार की मूर्ति होती है वह। किसी के घर जाकर वेदमंत्र कहना उनकी ओर से प्राप्त दक्षिणा कमर में लगाना, अनाज पड़शी में भर कर दूसरे के घर जाना, यह राजापुरी भट्ट जी लोगों का उद्योग होता है। बरसात के चार महीने घर में चातुर्मास कर और आठ महीने इस तरह प्रवास में बिताते हैं वे। इसी पर गुजारा करते हैं। यह उनकी अल्प संतुष्ट और बहुश्रुत वृत्ति होती है। यह भट्ट जी विद्वान होते हैं। पंडित होते हैं।

गोविन्द भट्ट जी इसी प्रकार वेद परायण पंडित जी थे। वेदाचार्य थे। बचपन में चार घर माँग कर उन्होंने वेदाभ्यास किया था। संस्कृत सीखी थी। अब भी वह चार घर माँगते हैं। दस घर माँग कर अपनी जीविका चलाते हैं, गुजर बसर करते हैं। समाज में वेद का प्रचार करते, सद् विद्या के प्रचार करते घूमते हैं।

उनकी एक पत्नी थी। उनका नाम था राधा देवी। जब पतिदेव प्रवास में जाते तो राधा देवी घर में देव पूजा करती हैं। अपने बाग में केला, सुपारी वगैरह के वृक्ष लगाये हैं, उसको पानी डालती हैं। आंगन लीपती पोतती हैं। घर साफ सुथरा रखती हैं। और सब समय देवपूजा-पाठ में बिताती हैं। इन पंडित भट्ट जी लोगों का घर प्राचीन काल के ऋषियों के आश्रम से होते हैं।

उन पवित्र आत्माओं को एक बात का दुःख था। घर की शोभा नहीं थी। तालाब की शोभा है कमल। रात की शोभा है चाँद। समुन्दर का वैभव है तरंग। वृक्ष और लता की शोभा है फूल और फल। घर की शोभा है बालक। वही नहीं था। राधा देवी को अपना जीवन सूना सूना लगता है। उनको माँ कहने वाला कोई नहीं है। बच्चे का माँ कहते ही माता को कितना आनन्द होता है! गोया त्रिभुवन का साम्राज्य मिला। यही स्त्री जीवन का सार है, यही उनका आत्म दर्शन है। राधा देवी को वह भाग्य नहीं प्राप्त हुआ

था अब तक। वह सोचती थीं मैं किसको पास लूँगी ? किसको गोद में लेकर खिलाऊँगी ? किसको अपने जीवन का प्रेमामृत पिलाऊँगी ? किसको झूलन में डालकर झुलाऊँगी ? किसको खिलाऊँगी ? किसका गीत गाऊँगी ? सोचते सोचते सुन्न सी हो जाती है वह !

राधा देवी ने व्रत रखा। भगवान को मनौतियाँ कीं। वट और पीपल की प्रदक्षिणायें कीं। आखिर उनकी मुराद पूरी हुई, मनोरथ सफल हुए। उनके बच्चा हुआ। खुशी से उनके रोम रोम गाने लगे। मैं अब माँ हुई। धन्य भाग। भाग जागे।

गोविन्द भट्ट जी भी घर पर ही थे। बारहवें रोज बड़े उत्सव के साथ बच्चे का नाम करण संस्कार हुआ, उसका नाम रखा गया। भास्कर यह नाम रखा गया। भास्कर का अर्थ होता है सूर्य।

नाम रखा सूर्य। भास्कर। मगर पुकारा जाता बाल ! बाल का अर्थ है बच्चा। नन्हा ! बेटा ! कोंकण में माँ बाप अपनी लाडली संतान को बाल कह कर ही पुकारते हैं। बड़े होने पर बाला-साहब कहा जाता है।

बाल शुक्ल पक्ष के चाँद की तरह बढ़ रहा था। गोविन्द भट्ट और राधा देवी ने उसको कितने ही गहने बनवाये, कपड़े बनवाये। वह यों ही सुन्दर था, खूबसूरत था। गोरा गोरा वह बालक, सबों का दिल खींच लेता था। अब राधा देवी भगवान का नहीं अपने बाल भगवान का गीत गाती। बाल-पुरान सुनाती। बाल पूजा करती। बालक ही प्रत्यक्ष भगवान है। बुढ़ापे में यह भगवान उनकी गोदी में आया है। वह भी चाँद का सा शांत, सूरज का सा तेजस्वी। गोया स्वर्ग का गुलाब।

बाल भास्कर रेंगने लगा, तुतलाकर बोलने लगा; माँ की उँगुली पकड़ कर खड़ा होने लगा। दीवार के सहारे चलने लगा। माँ बाप के लिये आनंद सागर निर्माण करने लगा। वह धीरे धीरे कौवे, गौरय्या, बिल्ली, कुत्ते को दिखाकर उनकी बोली बोलने लगा। इर्द गिर्द के हरे

भरे दृष्य को दिखाने लगा। फूल दिखाकर माँगने लगा। वह अपना जूठन माँ के कंधों में मुँह में माथे में सिर में बालों में लगाता। वह खफ़ा नहीं होती। वह खुश खुश हँसती। बाल भी हँसता। माँ को उसी में धन्यता मिलती, आनन्द मिलता।

राधा देवी अब अपने बाल को अच्छे अच्छे श्लोक सिखाने लगी। तिथि, वार, नक्षत्र, संवत्सर, सब सिखाने लगी। पुराण की छोटी कहानियाँ कहने लगी। अपने सनातन धर्म के संस्कार देने लगी। गोविन्द भट्ट जी जब घर आते तो अपने बाल को नहलाते, खिलाते, गंगाष्टक सिखाते, सूर्य स्तुति सिखाते। "ध्येयः सदा सवितृ मंडल मध्यवर्ती" वगैरह सिखाकर मित्रायनमः खयेनमः खगायनमः वगैरह कहकर सूर्य नमस्कार डालने कहते। नमस्कार का तीर्थ बाल अपने माता पिता को देता। माता पिता अमृत की तरह उसे प्राशन करते।

बाल बढ़ते बढ़ते आठ साल का हुआ। उसका उपनयन हुआ। "ममव्रते हृदयंते ददामि !" वगैरह कह कर उस पुण्य श्लोक पिता ने उसको अपनी दृष्टि दी। बूढ़ा बाप उसको संध्या, पुरुष सूक्त ब्रह्म-यज्ञ, वगैरह सिखाने लगे। साथ साथ वह स्कूल में भी जाने लगा। वह तेज था, होशियार था; हर बात में पहला नम्बर ले लेता वह। ध्रुव के स्थान की तरह सरस्वती मन्दिर में उसका स्थान अडिग था, निश्चित था।

अब वह अंग्रेजी स्कूल में जाने लगा। उस छोटे से देहात में पढ़ाने का इन्तजाम नहीं था। राजापुर के बोर्डिंग में रखा गया। वहाँ बोर्डिंग में उसे नये संस्कार मिलने लगे। नव मतवाद का अवतार हुआ। सुधार का नशा चढ़ा। उसने बाल बढ़ाये। माथे पर चन्दन लगाना छोड़ दिया। संध्या की वह पुरानी जंगली प्रथा भी छोड़ दी। होस्टेल की आमलेट कटलेट के नाम याद करने लगा। इस्तरी के कपड़े पहनने लगा। अब उसको देखकर राजापुरी गोविंद भट्टजी का लड़का कौन कहेगा ? रंग ढंग से वह देशी साहब बनता गया।

छुट्टी के दिनों में बाल घर आता था। कभी-कभी जब गोविन्द भट्टजी घर में होते थे, संध्या करने को कहते थे। वह झट जबाब देता था—"मुझे नहीं आती वह संध्या वंध्या! सुन्दर माथे पर राख लगाकर पानी अड़ाने की बेवकूफी कौन करेगा?" 'ना बेटा! स्नान संध्या नहीं छोड़नी चाहिये।' गोविंद भट्टजी कहते थे। "अब वह अंग्रेजी स्कूल में जाता है।" राधा देवी अपने लाडले की वकीली करते कहती "अगर एकाध रोज संध्या न की तो क्या नहीं चलेगा?" बीबी के वह शब्द सुनकर भट्टजी को बुरा लगता। वह कहते। "तू भी कैसी पागल की सी बातें करती है? संध्या छोड़कर कैसे चलेगा? हमारा बाल अंग्रेजी सीखता है इसलिये माता-पिता को भूलकर कैसा चलेगा? धर्म माता-पिता से बड़ा है, महान् है। धर्म भूलकर कैसा चलेगा? अगर वह मुझे भूल गया तो उतना नहीं दुःख होगा मुझे! मगर अगर वह अपना धर्म भूल जायगा तो मरणप्राय दुःख होगा मुझे। जा बेटा! संध्या कर, वह मत छोड़।"

जब बाल राजापुर के छात्रालय में रहता था, राधादेवी उसको कभी-कभी मिठाई बनाकर भेज देती थी। जब कोई वहाँ जानेवाला मिला बस मिठाई बनाकर भेज दी। एक बार गोविंद भट्ट जी कहीं बाहर जानेवाले थे। "राजापुर होकर जाओगे तो अच्छा होगा।" राधा देवी ने कहा—बाल को भी देख सकेंगे। उसके लिये थोड़ी मिठाई बना देती हूँ। अंबा बाई का अंगारा भी ले जाना थोड़ा सा—बाल से कहना रोज लगा लो।"

अंगारा और मिठाई साथ लेकर गोविंद भट्टजी राजापुर आए। बोर्डिंग में गये। सभी विद्यार्थी अचरज से देखने लगे। यह जानवर कहाँ से आया रास्ता भूलकर? बच्चे उनकी वह भली मोटी पगड़ी, वह बंडी वह घुटने तक की धोती वगैरह देखकर हँसने लगे। सभी साहब के बच्चे! गोविंद भट्ट जी अपने "बाल" की पूछताछ करने लगे।

"तुमको कहाँ जाना है ?" एक सुशिक्षित शरीफ बालक ने पूछा "यह बोर्डिंग है। इसे बोर्डिंग कहते हैं! यह क्या पंडित जी की लड्डू खाने की जगह है ? अन्न छत्र नहीं है यह, बोर्डिंग है। यहाँ "दक्षिणा-पांतु वगैरह कुछ भी नहीं है।"

दूसरे लड़के ने कहा "तुमको क्या बी० जी० चाहिये ? वह पी० जी० के घर गया है !"

बोर्डिंग में आने पर नाम बदलते हैं यह गोविंद भट्ट जी नहीं जानते थे। अंग्रेजी सीखने से लड़कों के नाम बदलते हैं यह वह नहीं जानते थे। वह जानते थे ब्याह करने पर लड़कियों के नाम बदलते हैं। वह पागल की तरह खड़े हो गये। उनके इर्द-गिर्द कौवे-कुत्ते जमा थे। इतने में बाल आया। गोविंद भट्ट भी खुश हुये। बाल को लज्जा हुई। "अरे कब से तेरी राह देख रहा हूँ मैं ! इधर आ ! इधर क्या नाई नहीं मिलते हैं ? ऐसे बाल मत बढ़ा। अमंगल सारा। यह लो घर से मिठाई लाया हूँ। अंबा माई का प्रसाद भी है। खूब अभ्यास कर। तन्दुरुस्ती ठीक रख।" पिता ने अपने पुत्र के पीठ पर से हाथ फिराया। बाल ने कुछ पैसे माँगे। "अरे ! ज़रा हाथ रखकर खर्च करना मुझे ये पैसे के लिये मीलों भटकना पड़ता है। और अब वेद विद्या को पूछता भी कौन है ? लो यह दस रुपये। फिर कभी भेज देंगे। अच्छा पहले नम्बर पास होना, भला !" गोविंद भट्ट जी बिदा हुये। बिदा लेते समय उनकी आँखें भर आयीं।

मगर कब यह जावेंगे ऐसे हुआ था बाल को। घुटनों तक की धोती पहने, इस भली बड़ी पगड़ी वाले बाप के पास खड़ा रहने की लज्जा महसूस करता था वह। अपने पिता को वह एक पुराना बावला समझने लगा था वह। वह इसको अपमान समझता था।

"कितनी बड़ी पड़ती थी वह, गोया गधे की पीठ पर का बोरा !" एक लड़के ने कहा "और वह पगड़ी ? बरसाती छाता !" दूसरे ने कहा "पूछता कैसा है बुढ़ऊ।" मेरा बाल, रहता है यहाँ, कहाँ है ?"

"गोया अपने देहात के घर में ही रहता है।" इन गँवारों को कहाँ कैसे बरतना चाहिये यह भी नहीं पता।" "बेवकूफ़ हैं! और क्या?" अरे! किसी के श्राद्ध में जाना, खीर खाना और दक्षिणा लेकर घर आना। यही इन लोगों की आदत है। दूसरा क्या?" हर एक बालक अपनी अपनी बात कहने लगा।

इतने में एक लड़के ने बाल को कहा अरे! तू क्यों भट्टजी नहीं बनता? रोज नया पक्वान्न्, खाने को पान, ऊपर दक्षिणा छन छन्! वह सब छोड़कर अंग्रेजी क्यों सीखने आया? अच्छी साफ़ सूफ हजामत करना। हाथ भर लम्बी चोटी रखना। बड़ी बड़ी मूँछें रखना। सिर पर अच्छी पगड़ी रखना! किसी की उदक शांति तो किसी की ग्रह शांति! किसी का श्राद्ध तो किसी का ब्याह! यह सब छोड़कर अरे रे बाल! फँसा कि इस अंग्रेजी बोर्डिङ्ग में। आई एम् व्हेरी व्हेरी सॉरी!"

अरे पता नहीं यह वेद कैसा कंठ करते हैं। किसी ने कहा "एक कविता कंठ करना मुश्किल है यहाँ। और कोशिश कर आज पाठ करता भी तो कल भूल जाती है।"

"हमें तो छप्पन सबूजेकट हैं।" चौथा बोला "ध्यान में क्या-क्या रहेगा?"

"वाहवा!" क्या दिमाग में ठूँसना क्या सीखना है?

इतने में पते की बात कहने वाला एक निकला उसमें "अरे बहस बन्द करो अब। देखो पोटली में क्या है!"

सब को यह प्रस्ताव मंजूर हुआ, वह पोटली खोली गयी। "अरे यह तो खोपरे का हलवा है!" "खूब!" "किसी के ब्याह के नारियल होंगे।" "ना ना! श्राद्ध के हैं!" "अरे! बाल से पूछो न!" "सत्य-नारायण के होंगे।" बात करते करते बच्चों ने हलवा कब का खतम किया। "वह छोटी सी पुड़िया क्या है?" वह भी खोली गई। अंबा माई का अंगारा है!" "हाँ इसी के बूते पर बी० जी० पहला नम्बर आता है!"

"यह तो संध्या के समय मुँह पर लगाने का पौडर है।" "इतना सा भेजा है। अगर भेजना ही है तो टोकरी भर क्यों नहीं भेजा?" बाल के पिता के शब्द सुना हुआ एक लड़का बोल उठा "यह तो बाल की माँ ने भेजा है। अरे! हरामी यह लगाकर पहला नम्बर पाता है? अब पता चला तेरी मक्कारी का। "हम सब के सब लगायेंगे अब!"

"जय देवी जय देवी जय अंबा माई
पहला नम्बर दे तू हम सब को माई!"

वह मजाक कर नाचने लगे। एक लड़के ने वह हवा में उड़ा दिया। अंग्रेजी शिक्षा ने मातृ प्रेम हवा में उड़ा दिया। फूँक दिया!

टण् टण्...टण् टण् भोजन का घंटा था। पेटपूजा का समय था। "घंटा हुआ मेरी संध्या आज नहीं हुई!" "मेरा होम वर्क वैसा ही रहा।" "अरे मेरा पूरा अभ्यास वहीं है!" अंगारा लगाया है अब अभ्यास क्यों?" वह सब उदर भरू पेटार्थी रसोईघर में दौड़ पड़े!

कुछ भी हो बाल अभ्यास ठीक करता था। वह था भी मेधावी, होशियार, प्रतिभाशाली। मैट्रिक में वह पहला आया। सारे विश्व-विद्यालय में पहला। वह अब संध्या स्तोत्र भूल गया था। मगर अनेकों अंग्रेजी की कवितायें पाठ थीं उसको। वह अच्छी अंग्रेजी बोलता था। लिखता था।

बाल के वार्षिक परीक्षा के समय गोविंद भट्ट जी कहीं भी हों, व्रत रखते। भगवान् की पूजा अर्चा करते। शाम तक रुद्र की आवर्तन करते। सायंकाल को भोजन करते। बाल सदा पहला नम्बर लेता था। मेरा बेटा कोई बड़ा अफसर होगा। यही कहते थे गोविंद भट्ट जी!

छुट्टी के दिनों में बाल घर आया। राधा देवी की दौड़-धूप शुरू हुई। कभी सेमी बना तो कभी हलवा। कभी तिकोने तो कभी पकौड़ियाँ। बाल की धोती और शर्ट वही धोती थीं। एक रोज बाल का शर्ट ठीक नहीं धोया गया। वह रूठा हुआ। अपनी माँ से कहने

लगा यह कुरता कैसा पहनूँ मैं ? यह दाग तो वैसा ही है। मेरा कुरता पिताजी का मलखाऊ कंबल थोड़े ही है ?"

"बाल ! घर में साबुन नहीं था। छोटा सा टुकड़ा था। शिकाकाई लगाकर धोया मैंने !" माँ ने कहा। "साबुन लाने पैसे भी नहीं थे। अब वे घर आयेंगे। साबुन लाकर साफ धो दूँगी मैं तेरा कुर्ता !"

पिताजी कब आयेंगे भगवान जाने। शायद महीना भर के बाद आयेंगे वे। इतने दिन क्या मैं यह गंदे कपड़े पहनूँ ? मुझे अंग्रेजी स्कूल में क्यों भेजा ? वह गुस्से में आकर बोला।

× × ×

वह मैट्रिक में पहला आया। सारे विश्वविद्यालय में पहला। स्कूल की तरफ से उसका शानदार अभिनन्दन किया। बाल को बड़ा वजीफा मिला। इनाम भी काफी मिला। वह अब कालेज में जाएगा। दूर के बड़े शहर में जाएगा। कालेज के बोर्डिङ्ग में जाएगा। राधादेवी को एक प्रकार का आनन्द था। साथ साथ दुःख भी। इकलौता बाल ! दूर जाएगा। अपना सुन्दर, होशियार, लड़का दूर रहे यह कौन माँ सहन करेगी ?

मगर माँ के वह आँसू बाल को पसन्द नहीं थे। एक रोज उसने अपनी माँ से कहा भी "तू ऐसी रोती क्यों है ? मुझे कितनी खुशी होती है, मैं खूब सीखूँगा, विलायत जाऊँगा, कलेक्टर बनूँगा। माँ ! मैं कॉलेज में जाऊँगा अब। वहाँ कितना मजा रहता है। तू रो मत। क्या मैं घर में रहकर भट्ट जी बनूं ? पंडित जी बनूं ? "घृतं चर्मे, मधुं जलं" करता रहूँ। कुश काश लेकर भीख माँगता रहूँ ? मुझे अंग्रेजी सिखाया क्यों ? अब मैं घर में कैसा रहूँ ?

राधादेवी ने कहा "खूब सीख बेटा ! बड़ा हो। खूब नाम रोशन कर। मगर बाल ! तू दूर जाएगा, इसका क्या मुझे दुःख नहीं होगा ? तुझे पढ़ाया बढ़ाया। अपने खून का दूध बनाकर पिलाया, पाला पोसा। अब तू दूर जाएगा। अगर वहाँ बीमार पड़ा तो ? तू मत जा

ऐसा थोड़ा ही कहती हूँ ? तू जा मगर सावधान ! सेहत संभाल । खुद को थोड़ा भी तकलीफ मत दे। तुझे अब बड़ी बड़ी किताबें पढ़नी पड़ेंगी। आँखों की फिक्र कर। रोज दूध पी। चाय वगैरह मत पी।" इसी प्रकार की छोटी छोटी बातें कहने लगी वह प्रेम से। व्याख्यान देने लगी वह मानो प्रोफेसर थी ?

पूना जाने का दिन आया। माँ ने कोकम का तेल दिया बेटे ने कहा "वहाँ वेसलीन है मां ! कोकम का तेल देखकर साथी हँसेंगे !" मां ने दो भिलावे दिये तो बेटा बोला आयडीन है माँ।" "अगर तू नहीं चाहता है तो मत ले जा। मैं क्या जानूं पगली ! हम अपनी पुरानी माताएँ प्रेम देना जानती हैं। वह सब चीजें जो साथ लेने से साथी हँसेंगे निकाल रख !"

मां को प्रणाम कर बाल पूना जाने के लिए निकला। "सुमुखश्चैक दंतस्य कपिलो गजकर्णकः" गणपति स्तोत्र कहते गोविन्द भट्ट जी बिदा करने निकले। राधा देवी एक पगली सी उसके साथ चली और तब तक जब तक वह दीखता था वहीं रास्ते पर खड़ी रहीं। जब वह आंखों से ओझल हुआ तब भारी दिल से घर लौटी। अब घर सूना सूना प्रतीत होता था उसको।

× × ×

गोविन्द भट्ट जी पडशी लेकर कोंकण भर घूमते थे। उनके लिये आराम हराम था। नदी क्या आराम करती है ? और हवा ? सूरज ? चांद ? तारे ? अगर विश्व के यह देवता आराम नहीं करते तो उसका पूजारी ब्राह्मण कैसे आराम करेगा ? बाल की शिक्षा की आवश्यकतायें पूर्ति करने के लिए वह खुद अपना पेट काटते थे। न पेट भर खाना, न बदन पर कपड़ा। मगर यह सब अपने बाल के लिये खुशी खुशी सहन करते थे। बाल को छात्र वृत्तियां थीं, वजीफे थे। फिर भी वह घर से पैसे मांगता था। वह कॉलेज में था। कॉलेज में जाने वाले को सब की आवश्यकता है। उसको शरीफ बनना है ? अपटूडेट रहना है ?

बाल को दो पैर कम थे सायकिल खरीदी उसने। उसने सूट सिलाये। कुछ हांफ पेंट सिलाये। कुछ कुर्ते। नायट ड्रेस। टेनीस की रेंकेट! बेडमेंटिन रेंकेट। हॉकी स्टिक। क्रिकेट बेट! आइये बाल का कमरा देखें जरा वह फिर कितना सुन्दर है। वह आईना बेलजम का बना है वह। वह कंघे। वह ब्रश। वह शांपो, पॉमेड, क्रीम, स्नो, वगैरह की सुन्दर बोतलें। टॉयलेट सोप, कपड़े का सोप, वह ओवलटाईन का डिब्बा, कोको, बिस्कीट का, चॉकलेट का स्टोक, वह कॉलर, टोप, बुरसू, जांघिया, खड़ाऊं, रुमाल, नट नटी ध्येय भूत तसवीरें! अगरबत्ती का बंडल भी! बोर्डिंग का विद्यार्थी का कमरा क्या है मानो हॉटेल, सेलून, वाचनालय, कलाभवन, संगीतघर, भोजनालय सब का सम्मेलन है।

बाल को पैसे की जरूरत क्यों नहीं होगी? यह एकतर्फा शिक्षा किस काम की? आजकल अपटूडेट जानकारी रखने की आवश्यकता है? रेडियो प्रोग्राम, सिनेमा की जानकारी, उसके नट नटी की खास आदतें, थियेटर का इनफरमेशन्, क्रिकेट, हॉकी, फुटबॉल चेंपियन की माहिति, सभी जानना परमावश्यक है। वही तो आधुनिक संस्कृति की जान है! माडर्न कल्चर और मोडर्न एज्युकेशन की सोल है! कॉलेजी शिक्षा और इस बाल जीवन शिक्षा के लिये पैसे की आवश्यकता तो होगी ही। बाल की इस शिक्षा के लिये आर्थिक मदद करने में गोविंद भट्ट ने चलते पैर में पंख लगा लिये। निंदा स्तुति सब भूल कर घर-घर वेद वाणी का प्रचार किया। पैसे नहीं तो मुट्ठी भर चावल और दस-पाँच सुपारी भी लिये। उसको बेचा। जो पैसे आये बाल को भेजे।

बाल पूना में सीखता था। राधादेवी का मन बाल की स्मृतियों में उलझता रहता। उस भूतकालीन स्मृतियों के महासागर में डूबता-तैरता रहता। आँसू निकल पड़ते। उसका दिल चीख उठता। "भगवान उसकी रक्षा कर!" कभी छींक आती तो वह कहती आज बाल ने याद की होगी। मगर बाल की बात न्यारी थी। वह आजकल शरीफ

शहरी बन रहा था। कितना अभ्यास ? कितने ऐंगेजमेंट्स ? कितने एपॉएण्टमेंट्स, कितने लाईट और हेवी फीस्ट, टेनीस सेट्स और प्रेम का गूढ़ गुञ्जन !

बाप बेटे के लिये घर-घर भीख माँगता है। माँ घर में बैठकर भगवान से कामयाबी की प्रार्थना करती है। बेटा उधर मजा करता है!

+ + +

बाल अब आई सी एस् होने विलायत जानेवाला था। एक रोज मालती और बाल घूमने गये थे। दोनों एक दूसरे से मुहब्बत करते थे। दोनों दूर घूमने गये। वहाँ कोई नहीं था। एकान्त था। ठण्डी-ठण्डी मीठी हवा बह रही थी। दोनों हरी हरी दूब पर बैठे। आसमान में तारे चमचम चमक रहे थे। अँधियारा उनकी तरफ देख रहा था। धीरे धीरे चाँद भी आया। मानों अँधियारे में प्रेम का प्रकाश आया। भावना में शब्द उमड़ने लगे।

"सचमुच आपका मुझ पर प्रेम है ?" मालती ने पूछा—

"जी !" बाल ने जवाब दिया।

"इसका सबूत ?"

"इतनी देर तक का हमारा मौन !"

"आप विलायत जायेंगे। वहाँ जाकर मुझे भूल नहीं जायेंगे ?"

"यह कैसे संभव है ?"

"कहते हैं मर्दों को रोज नयी नयी चीज भाती है !"

"वह उसी वस्तु के अनन्त रूप देखते हैं। अनन्त रूपों में एक ही बात देखते हैं। सच्चा प्रेम कभी अपना रंग नहीं बदलता। सच्चे प्रेम की क्रिया नित्य नवीन होती है, जैसे कवि को उषा और संध्या। वह क्या कभी सूर्योदय सूर्यास्त देखकर भी उकताता है ? यह सच है मनुष्य नित्य नूतनता प्रिय है मगर यह नवीनता अपने प्रेम की वस्तु में महसूस करने की शक्ति भी मनुष्य में है। जिस प्रेम में यह शक्ति नहीं वह प्रेम प्रेम नहीं, मगर वासना है, आसक्ति है। तू मेरे लिये

सदैव नयी है। मैं सात हजार मील दूर से प्रेम का चश्मा लगाकर तुझे देखूँगा। तेरे मुखचंद्र का संशोधन करूँगा। तेरे प्रेम सिन्धु में डूबूंगा तैरूँगा। नये नये शोध लगा लूंगा।"

"मर्द खूब गप हाँकते हैं!"

"जी! मगर वह छिपे दिल नहीं होते। उनमें मुक्तता होती है। तकल्लुफ नहीं होता। वह दिल की बातें कह देते हैं। मगर स्त्री मूक होती है। गहरी होती है। उसका तह नहीं लगता!"

"मुझे पत्र लिखते रहो। मैं उसकी राह देखूंगी। दूसरा पत्र आने तक पहला पढ़ सकूँ, ऐसा लिखो।"

"तो मुझे रोज उपन्यास लिखना पड़ेगा। सही कब करूँ?"

"मन में जब है तब लिखने को देर नहीं लगती!"

"वह बात लिखने में, जो दिल की सच्ची होती है, बहुत देर लगती है! ऊपर ऊपर की बातें चाहे जितनी लिख सकते हैं। दिल को कागज पर अंकित करते समय शब्द नहीं मिलते। वह उसी प्रकार की प्रसव-वेदना है।"

तुम्हारी चार पंक्ति मुझे पन्द्रह रोज तक काफी है। वह पढ़ना क्या......! तुम्हारी चार पंक्ति गोया प्रेम के चार समुद्र। तुम भी अच्छे पागल निकले! प्रेम ऐसा नहीं होता भला! प्रेम की भाषा एक होती है। सच्चा प्रेम कोरा पत्र भेजेगा। वह कोरा पत्र अनन्त भाव प्रदर्शन करेगा। मगर नियमित पत्र लिखो। तुम दो साल रहोगे वहाँ। चौबीस महीने। सात सौ बीस रोज!"

"उसके घंटे करो। मिनिट और सेकंड करो।"

"तुम्हें मजाक सूझती है। मुझे मिनिट भी युग सा लगेगा।"

"तुम्हारा अभ्यास है। अभ्यास में मन रमेगा।"

"मगर मैं कोंकण में नहीं जाऊँगी।"

"कौन कहता है वहाँ जाना होगा? और वहाँ धरा ही क्या है? पत्थर और मिट्टी! साँप और बिच्छू।"

"राजापुरी भट्ट जी की कल्पना कर ही मैं चौंक पड़ती हूँ ! प्रत्यक्ष देखकर मैं मर ही जाऊँगी !"

"मगर मैं वहाँ जाऊँगा भी नहीं ! पिताजी के पाँच दस रुपये महीना भेजा, बस छुट्टी ! तुम्हें सास के हाथ में लीपने पोतने कौन भेजेगा ?"

"तो क्या खुद के हाथ में रखेंगे ?"

"ना ना !" बाल ने मुस्कराकर कहा, मैं तुम्हारे हाथ में रहूँगा। लोग कहते हैं, रानी सरकार का राज अच्छा था !"

"हवा कितनी सर्द है ? मगर उठने को जी नहीं चाहता।"

"प्रेम की गरमी है। हवा नहीं आयेगी !"

"चलें अब हम।"

"मगर धीरे। नहीं तो गिरेगी !"

"गोया तुम कभी पड़ोगे ही नहीं।"

"अगर तुम गिराओगी तो गिरूँगा।"

"यही !"

"क्या ?"

"मर्द यही सोचते हैं। स्त्री गिरानेवाली। नरक के द्वार पर पहुँचाने वाली मर्दों के रोम रोम में यह बात समा चुकी है। कितनी ही किताबें पढ़ीं, वह पुराने संस्कार क्या छूटेंगे ? अहंकार क्या उतरेगा ? खुद गिरकर इलजाम लगाओगे स्त्रियों पर !"

"हम एक दूसरे को गिराते चढ़ाते हैं। दोनों समान दोषी हैं। निर्दोष कौन है? मालती! हम साथ साथ चढ़ेंगे या साथ साथ गिरेंगे।"

"स्वर्ग या नरक में साथ साथ रहें !"

"तो दुःख क्यों पास आएगा ? अरी वह देख गड्ढा। गिरोगी।"

"मैंने देखा तुम्हारा ध्यान है या नहीं !"

"रात के समय यह रात-कीड़े कितने चिल्लाते हैं ? अंधियारी पड़ते ही शुरु होता है इनका कान खाना।"

"जैसे बिस्तर पर पड़ते हैं विवेक का दिल को चुभना !"

"याद है, तुम्हें हमारी पहली मुलाकात ?"

"मैं सब कुछ भूल सकती हूँ मगर वह नहीं। उस रोज मेरे हृदय मन्दिर का नया दीवानखाना खुला। जीवन का अज्ञात भाग प्रकट हुआ। वह किस्सा कैसे भूलूँगी मैं !"

"जाने दो ! दिल में ही रहने दें वह बातें। शब्द में गूँथकर उनका सौंदर्य क्यों नष्ट करें ? अंधेरे में से धीरे धीरे निकलनेवाली उषा की ओर देखकर शांत आंखें मूँद लें। हँसे। रोयें। गम्भीर बनें। पवित्र और पावन बनें। विशाल और उदार बनें !"

"प्रेम विशाल और उदार बनाता है !"

"मगर वह कभी कभी संकुचित भी बनाता है।

"उसे कभी कमरा भाता है तो कभी विशाल आसमान कम पड़ता है !"

"मनुष्य का प्रेम कूआ-सा है, कभी लालसा नजर आती है। मगर सागर सा अपरंपार प्रेम देखने नहीं मिलता।"

"हम उस ध्येय की पूजा करें।"

"करना कठिन है। बोलना आसान।"

"प्रयत्न तो कर सकते हैं !"

"देखें।"

बाल की विदा करने बंदरगाह पर कितने ही लोग आये थे। वहाँ मालती भी थी। प्रेम गंधा प्रेम रूपा मालती। बड़ी यातनाओं के साथ बाल ने उससे बिदा लिया। जहाज का चलना शुरू हुआ। वह रुमाल हिलाता था। मालती रुमाल हिलाकर जवाब देती थी। दोनों हृदय भी हिलते थे। तरंगों पर जहाज हिलता था। मालती और बाल के हृदय में अनंत तरंगे उठती थीं। बाल की आँखों में आँसू आये। मालती ऊपर देखना छोड़ कर नीचे समुद्र की ओर देखने लगी ! जहाज गया। उसको ले गया ! दूर दूर अति दूर !

जहाज समुद्र पर खेलते कूदते निकल गया। बाल तब तक, जब तक बम्बई दीखती थी, खड़ा रहा। उसके बाद अपने केबिन में गया। बेग खोलकर मालती की तस्वीर, उसकी हृदय स्वामिनी की तस्वीर, उठाकर देखने लगा। वह वैसे देखते ही बैठा।

आज बाल विलायत जाएगा। बेचारे बाप शंकर भगवान का अभिषेक कर रहे थे। राधा देवी अश्रुओं से अभिषेक कर रही थीं। "मेरा कलेजा आज समुद्र में है। सरकारी वजीफा। शायद घर आने नहीं दिया सरकार ने। खूब काम होगा। भगवान! उसकी रक्षा कर!" वह मन ही मन प्रार्थना कर रही थीं। उनकी आँखें अपने बाल की मूर्ति देखती थीं। दिल उनके लिये रोता था।

बाल विलायत पहुँचा। बार बार मालती की याद होती थी उसे। कब मैं उससे मिलूँगा? कब मैं उससे ब्याह करूँगा? कब मैं उससे संसार करूँगा? यह विचार करता था वह। मगर उसके अभ्यास में खंड नहीं पड़ा। वह बार बार पत्र लिखने लगा मालती को। वहाँ के सुन्दर नजारों के कितनी ही तसवीरें भेजी उसने। अपनी तसवीर भी भेजी एक। मालती ने उस तसवीर की पूजा की प्रेमाश्रू से।

गरमी के दिनों में राधादेवी ने कुछ आम और कटहल के पापड़ बनाये। एक रोज गोविन्द भट्ट जी से वह बोलीं "क्या यह भेज सकेंगी अपने बाल को? दूसरा क्या भेजें? कोंकण का मेवा है यह!"

"विलायत कैसे भेजेंगे इसे? वहाँ तक कैसे पहुँचेगा यह?" गोविन्द भट्ट जी ने कहा "रास्ते में सड़ जायेगा। और साहेब के देश में कोंकण की यह चीजें कौन खायेगा? स्वर्ग में अमृत पीते हैं। वहाँ क्या कोंकण की कांजी सुहढ़ करेंगे? यह देखकर तेरे लाल पर हँसेंगे सब!"

"तो नहीं भेजूंगी मैं। अगर मेरे बाल पर हँसेंगे यह देखकर तो क्यों भेजूँ मैं?"

एक रोज राधादेवी को एक बुरा स्वप्न पड़ा। बाल को अपने

पास से कोई छीन लेता है ऐसा था वह सुपना! वह डर गई। रोने लगी। गोविन्द भट्ट जी ने उसका समाधान किया।

"कितना दुष्ट स्वप्न था? भगवान उसकी रक्षा करें।" उसने दूसरे ही रोज ग्रह शान्ति कराई।

"एक रोज राधाबाई ने कहा गोविन्द भट्ट जी से, बाल का पत्र क्यों नहीं आया? जब से गया, एक भी पत्र नहीं लिखा।"

"पागल है तू!" गोविन्द भट्ट जी ने कहा अपनी पत्नी से, वहाँ से बड़े बड़े साहबों के पत्र मात्र आते हैं। सबों के नहीं आते। भगवान को फिक्र है उसकी।"

मालती को बराबर पत्र आते थे। सुन्दर गुलाबी लिफाफे, भावना पूर्ण विचार, सुन्दर स्याही सुन्दर अक्षर, मीठी भाषा, सब कुछ सुन्दर और मधुर। मालती को आती थीं उसके साहब की चिट्ठियाँ। मगर माँ को उसके बाल की चिट्ठी नहीं आती थी।

बाल आई० सी० यस० होकर आया। बरार में कलेक्टर हुआ। उसका मालती से ब्याह हुआ। उस ब्याह में न मंत्र थे न तंत्र। वहाँ किसी भट्टजी पंडित जी की जरूरत नहीं थी। वह नव मतवादी ढंग का विवाह था। मित्रों को दावत दी गयी। हार गुच्छे अत्तर गुलाब हुआ। दोनों की तसवीरें ली गयीं। वह अखबार में प्रसिद्ध हुए। बालका नाम बालासाहब हुआ। मालती बाई साहबा।"

अब उमरावती के सरकारी बंगले में बालासाहेब रहते थे। नौकर थे, चाकर थे, सिपाही थे। क्या ठाट था बालासाहब का? वह योंही गोरे गोरे गुलाब के फूल से थे, रुवाब था। अधिकार की आभा और चढ़ी थी? अक्सर साहबी ढंग से रहते थे। घर में इग्लैंड आ बसा था। दिवान खाने में कुर्सियाँ, मेज, सोफे, परदे, पंखे, रुमाल, सब कुछ अपटूडेट था मामला!

घर में रसोईन थी। बाईसाहबा को कोई काम नहीं था। मगर उसका सुशिक्षित मन काम ढूंढ रहा था—सुबह बालासाहब के साथ

टेनिस खेलने जाना, दुपहर फोन लगाना। रेडियो था ही। कभी कभी गिलाफे पर "गुड नायट" लिखा जाता था। अपनी सखियों को पत्र लिखने का काम भी निकल आता था। खाने के नित नये पदार्थ ढूंडने का काम भी था। कुत्ता तो साथ था ही।

उससे खेलना उसको चूमना, उससे बातें करना वगैरह काम भी कम नहीं था। इस प्रकार समय बीतता था। मानवी आयुष्य का सार्थक्य होता था!

× × ×

बालासाहब विलायत से आये, मगर घर नहीं गये माता पिता से भेंट करने। आते ही सरकार ने काम दिया होगा। यहाँ आने से रोका होगा। क्या करेगा बेचारा? वहीं अपने माँ बाप से मिलने के लिये तड़फता होगा। राधा देवी यही सोचती थीं।

"वहाँ है न सुख से? हमें वही बस है।" गोविंद भट्ट जी कहते थे। "सरकारी नौकरी क्या मुफ़्त मिलती है? वह तो काँटों का ताज है। कहते हैं देश और धर्म के लिये माँ बाप को भी छोड़ना पड़ता है। नौकरी के लिये भी माँ बाप को छोड़ना पड़ता है, उनका मोह छोड़ना पड़ता है।

"मगर बहू का भी मुँह नहीं देखा अबतक।" राधा देवी कहने लगी 'सुना है गुलाब सी है, चांद सा मुखड़ा है, तोते की सी नाक है, कमल सी आँखें हैं। क्या मुझे बहू का सुख नहीं है? क्या चंदरोज की छुट्टी नहीं मिलती है उसे?"

"अब बने हैं सरकार के गुलाम! क्या करेंगे। शायद ऊपर के साहब नहीं आने देते होंगे। क्या करेगा बेचारा!"

गोविंद भट्ट जी रोज ब रोज थकने लगे। कितने दिन चलेगी यह पुरानी मशीन! जन्म भर पैरों में पर लगाकर घूमे, कष्ट किये। अब शक्ति नहीं थी उस देह में। यों तो वह अब भी आंगन बुहारते थे। वे कभी कभी कह उठते थे, अब ज्यादह दिन नहीं जीऊँगा मैं।

और जीकर करना ही क्या है ? सभी देखा । भगवान कब कृपा करेगा यह देखना है !"

' एक बार बच्चे को देख आएंगे । कब देखूँगी मैं उसको ?" राधा देवी कहती थीं'।

"मुझे किसी बात की इच्छा नहीं रही है ।" गोविंद भट्ट कहते, कहाँ जाएँगे इस बुढ़ापे में ? नहीं होता यह गड़बड़ । एक दो कष्ट हैं ? जहाज़ पर बैठना, रेल पर चढ़ना । नज़दीक क्या है ? बरार खानदेश जाना है । यहीं अब शांत होकर राम राम कहना चाहता हूँ मैं !"

वहाँ बालासाहब का एक छोटा बालासाहब हुआ था । उस बच्चे की तारीफ़ करने में मालती का समय बीतता था । कितने कपड़े उसके ? कितने खिलौने ? बच्चे को सैर कराने की गाड़ी । उसका एक नौकर । दूध पिलाने वाली दाई और कितनी तसवीरें उसकी ? कुत्ते के पास बैठी तसवीर, गाड़ी में बैठकर, मां के पास बैठकर, खिलौना लेकर नंगा, खाना खाने की तस्वीर ! घर भर में तसवीरें छोटे सरकार की । हवस की सीमा नहीं, हाँ समय और खरचने को पैसे हों तो ऐसा कला-विलास सूझता है ।

एक बार पोते को देखेंगे । उसको गोदी में लूंगी एक बार तुम भी आओ । दो दिन रहकर आएंगे । मैंने उसे नौ महीने अपनी कोख में रखा है, खून का दूध बनाकर पिलाया है । जन्म भर घूमते रहे । अब एक बार और । मेरे लिये ! क्या जीवन के साथ प्यार भी अस्त होने लगता है ? चलेंगे न ? मैं नहीं सुनने की । हाँ कहो, कहो हाँ !" राधा देवी ने बुढ़ापे में एक बार प्रेम का नखरा किया, पति को मनाया । गोविंद भट्ट जी मान गये । राधा देवी ने मिठाई बनाई । आम की बर्फी, आवले का मुरब्बा, आमके पापड़ । अच्छे बरगला का चूड़ा । सब कुछ तैयार होने लगा । गोविंद भट्ट की पडशी सजने लगी अपना गांव छोड़कर वह वृद्ध मां बाप पुत्र-मुख देखने निकले ।

दोनों जहाज़ पर चढ़े, दोनों ने जहाज़ पर पानी तक मुँह में नहीं

डाला। बंबई बंदरगाह पर उतरकर उन्होंने नल पर स्नान किया। वहीं थोड़ा सा फलाहार कर गाड़ी पर बैठ बोरीबंदर पर आये। वहाँ टिकिट कहाँ कटवाते हैं, इसका भी पता नहीं। पूछने पर सीधा जवाब देनेवाला भी कोई नहीं। सभी सहानुभूति शून्य पशु !

"खैर, किसी तरह एक बार टिकिट ऑफीस पर आये। ओह ! कितनी भीड़ ? गोविंद भट्ट जी ने अपनी पगड़ी राधा देवी के पास दी वह टिकिट कटवाने गये। कितनी धक्कमधक्की ? यहाँ बूढ़ों को बच्चों को जरा रियायत देने की बात नहीं है। सभी समानता के पुजारी हैं ? "ए बूढ़ऊ आगे जा !" कोई मगरूर जानवर चिल्लाया ! आगे वाला बुढ्ऊ को पीछे ढकेलता था। किसी तरह खिड़की तक पहुँचे। "पैसों का बटुवा नहीं खुलता। ला पैसे जलदी !" टिकिट बाबू चिल्लाये। टिकिट कटवाकर वह सही सलामत भीड़ से बाहर आए। बालासाहब और बाईसाहबा को प्रवास करना हो तो क्या शान ? वह फर्स्ट क्लास में प्रवास करेंगे। उनके साथ एक नौकर होगा। मगर यह सुख गोविंद भट्ट जी कैसे हजम करेंगे ? सुख को भी बदहजमी न होती ?

"अरे बुढऊ लूँ यह पड़शी ?" एक मजदूर ने पूछा, आँख और चेहरे पर के भाव से ही उसने दर्शाया "जीवन भर जिसने इस पड़शी को उठाया, उसके लिये यह अब क्या भारी है ?" गोविंद भट्ट जी गाड़ी के पास गये, गाड़ी में चढे, गाड़ी चली। साथ साथ गोविंद भट्ट जी का विष्णु सहस्र नाम भी शुरु हुआ। कहीं गाड़ी कुछ ज्यादा देर ठहरी। गोविंद भट्ट जी नीचे उतर कर संध्या कर आये। अपना डिब्बा भूल गये। "कहाँ है री तू ?" वह चिल्लाये। गाड़ी ने सीटी दी। "यहीं हूँ मैं। झट चढ बैठो ?" बूढी ने कहा खिड़की में से मुँह निकाल कर।

आखिर उमरावती आया। दोनों ने अन्न नहीं खाया था। केले और नारंगी खाकर उस वृद्ध पति पत्नी ने दिन बिताये थे। दोनों भूखे थे। पेट की भूख से दिल की भूख अधिक थी। कब देखेंगे हम अपने बालासाहब को ? कब देखेंगे हम बहू को ? कब देखेंगे उसके

नन्ने को ? प्रेम की भूख ! वही जानता है जो महसूस करता है।

नल पर हाथ मुँह धोकर दोनों बाहर आये। उन दोनों के चारों तरफ टांगे वालों ने गर्दी की। खींचातानी शुरु हुई "दूर से बातें कर, याद रख अगर हाथ लगाया तो !" कलेक्टर का बाप था वह ? गोविंद भट्ट ने एक गाड़ीवान से कहा 'हमें बालासाहब के घर ले चल !'

"कौन बालासाहब ?"

"यहाँ के कलेक्टर हैं न ?" अभिमान से कहा गोविंद भट्ट जी ने।

"कलेक्टर के घर ?" गाड़ीवान ने हँसकर कहा।

"हाँ, वह मेरा लड़का है।" राधाबाई ने कहा।

टांगा चला और बालासाहब के बंगले पर जा रुका।

"मैं अंदर जाकर देख आता हूँ। गाड़ी खड़ी कर यहीं।" गोविंद भट्ट जी ने कहा। वह गाड़ी पर से उतरे। अंदर बंगले में गये। ऊपर गैलरी में बालासाहब और बाईसाहब बैठी थीं। मालती की गोदी में बच्चा था। "देख कैसा हँसता है मगर तुम्हारे पास नहीं आता।" मालती ने कहा—"मेरे पास कैसे आएगा वह ? तू दिन भर घर पर रहती है। उससे खेलती है। मुझे यह बेकार समय कहाँ मिलता है ?" बालासाहब ने कहा—"मालूम है तुम्हें कितना काम करना पड़ता है। दस्तखत करना ही तुम्हारा काम है। आँफीसर क्या हैं दस्तखत बाबू हैं ! हमें घर पर कितना काम होता है !" मालती ने मुस्कराकर कहा।

"यहीं रहता है हमारा बाल ?" गोविंद भट्ट जी ने नीचे से ही पूछा। "अरे ए पंडित ! अन्दर कहाँ घुसा ? अरे साहब ऊपर हैं शरम नहीं आती ?" दरवान बकने लगा—वहीं दरवाज़े पर बांधा हुआ कुत्ता भी भूंकने लगा। "यहीं होगा हमारा बाल जरा देख।" बूढे ने फिर से कहा। बालासाहब ने ऊपर से देखा। गोविंद भट्ट ने नीचे से यों आँखे चार हुईं। पिता पुत्र की आँखे मिलीं। मगर बालासाहब कुछ भी नहीं बोले। सिपाही हाथ पकड़कर गोविंद भट्ट को ढकेलने

लगा। बालासाहब बाईसाहब से अपने प्रेम के खेल खेलने लगे। मृदु माधुरी बातें करने लगे।

बूढ़ा लजाया, शरमाया। उसका दिल टूट गया। वह वापिस लौट आया। "हमें फिर स्टेशन पर ले जा?" बूढ़े ने गाड़ीवान से कहा। "क्या हुआ? हमारा बाल यहाँ नहीं रहता है?" राधा देवी ने पूछा "अरी तेरा बाल मर गया। यहाँ बालासाहब और उसकी मेडम रहते हैं।" "ऐसी अमंगल बातें क्या करते हैं भगवान उसे शतायुषी बनावे।" माँ ने आशीर्वाद दिया।

टांगा चलने लगा। गोविंद भट्ट जी से बोला नहीं जाता था। क्रोध लज्जा शोक वगैरह से उनका चेहरा फक पड़ गया, शरीर शिथिल सा हुआ। दोनों स्टेशन पर आये। "इस गाँव में पानी नहीं पीऊँगा। पहले रेल में बैठेंगे। अगला स्टेशन आने पर पानी।" बूढ़े ने कहा। नासिक का टिकिट लिया। दोनों नासिक के लिये रवाना हुए।

दो दिन के भूखे थे। एक छोटे से स्टेशन पर उतर कर पानी पीया दोनों ने। गोविंद भट्ट जी मौन थे। वह गंभीर थे, राधा देवी के रोकने पर भी आँसू नहीं रुके।

"कौन आया था अभी।" बाईसाहब ने दरवान से पूछा। "मोत्या भूंक रहा था? कोई भिखारी था। शायद पागल भी था कुछ बक रहा था। निकाल दिया।" दरवान ने कहा। बालासाहब ने सुना।

× × ×

नासिक में एक पंडित के घर गोविंद भट्ट जी उतरे। गंगा स्नान किया। देव दर्शन भी हुआ, पंचवटी देखी, सीता गुफा देखी, शंकराचार्य जी का मंदिर भी देखा। अब किसी बात की आशा नहीं रही थी। घर जाने को जी नहीं करता था। दूसरे रोज संध्या वंदन करते समय वह गिर पड़े। बस, फिर नहीं उठे। उन्होंने राम कहा, राम के चरणों में देह रखी। राधा देवी निराधार थीं अब पति गया और पुत्र सजीव मृत था।

× ×

राधा देवी का केश मुंडन हुआ। सारी धर्म विधि नासिक में हुई थी। वहीं किसी के घर रसोई वगैरह कर गुजर बसर करने लगीं। वहाँ एक रोज एक रसोईन से राधा देवी की मुलाकात हुई। वह रसोईन नासिक की थी। मगर उमरावती में रहती थी। राधाबाई और उस स्त्री की खूब बातें हुईं। राधाबाई ने अब उस स्त्री के साथ उमरावती जाने का तय किया। माँ की हैसियत से नहीं, कम से कम नौकरानी की हैसियत से अगर जाने को मिला तो भी काफ़ी है। ऐसा सोचा उस माता ने।

राधाबाई उमरावती को आईं। कहीं काम वगैरह देखने लगीं।

बाईसाहबा गर्भवती थीं, दिन भरे थे। अभी अभी दूसरे संतान की माँ होने वाली थीं वह। यों तो घर में एक रसोईन थी मगर बच्चा और जच्चे का काम करने वाली और एक स्त्री नौकरानी की आवश्यकता थी। बाईसाहबा ने अपनी रसोईन से कहा। इस रसोईन से, राधाबाई जिस रसोइन के साथ आई थीं उसका काफी मेल जोल था। राधाबाई इस प्रकार के सुयोग की राह देख रही थीं। उस माँ को अपने प्रिय पुत्र के घर नौकरानी के रूप में जाते समय ही आनंद हुआ।

आज एक माँ अपने लाड़ले के घर नौकरानी बन कर जाने वाली थी। उसको वहीं रहना था। वहीं खाना, वहीं पीना, वहीं रहना। एक कमरा दिया गया उसके लिये। मातृ-हृदय में पुत्र वात्सल्य का महापूर आया था आज।

बाई साहबा का दूसरा बच्चा हुआ नक्षत्र का सा था। राधाबाई अपनी बहू···नहीं मालकिन की सेवा करने लगी। तेल लगाना, गरम पानी से नहलाना, साबुन लगाना। सब कुछ करती थीं वह प्रेम से करती थी। उसका स्पर्श बाईसाहबा को मातृ-स्पर्श सा प्रिय लगता था बच्चे का सभी काम वही नई नौकरानी करती थी। पहला लड़का नरेन्द्र। उसका सभी वही करती थी। अपने इन छोटे मालिकों का

काम करते समय उसे प्रेमाश्रू उमड़ आते थे।

नव प्रसूत बाईसाहबा को वह पौष्टिक पाक और लड्डू बनाकर खिलाती। इस बूढ़ी नौकरानी को काम करते समय न जाने कहाँ से ताकत आती है। वह सब कुछ करती थी। अपना पे से करती थी। उसके काम में अपनापा था, प्रेम था, वात्सल्य था, रस था। उस बुढिया ने अपने लाड़ले बाल"""नहीं मालिक बालासाहब को देखा। बालासाहब ने नौकरानी को देखा "यह है क्या तुम्हारी नई नौकरानी" उन्होंने रानी सरकार से पूछा। रानी सरकार ने हाँ कहा।

बच्चे के रोते ही उसे झूलन में डालकर झुलाना, उसको ठीक कपड़े में लपेट कर घुमाना, उसको खिलाना, पिलाना नन्हाना, सब कुछ नई नौकरानी करती थी। उसे काम कहने की जरूरत नहीं थी। काम ही उसका आनंद था। अपने आप सब कुछ करती थी वह। नये नन्ने का नाम दिनेश रखने का तय हुआ था। दिनेश और रमेश। राम लक्ष्मण की जोड़ी। लव कुश या पुनर्वसु नक्षत्र के दो तारे थे?

दिनेश अब बढ़ने लगा। वह अपनी बड़ी बड़ी आँखें निकाल कर सारी सृष्टि का निरीक्षण करने लगा। नई नौकरानी उसे घासपात की हरियाली, नाचने डुलनेवाली सृष्टि, फल फूलों की रस गंध मयी रंगीन सृष्टि, परियों की वह चहकनेवाली संगीत मय सृष्टि, दिखाती थी। वह अर्भक विश्व का अनंत दर्शन कर ज्ञान और संस्कार संग्रह कर रहा था।

रमेश भी नई नौकरानी का प्यारा बना था। रमेश क्या है इस नई नौकरानी की साया। कभी वह कहता, गाना सुनावो, कभी कहता कहानी सुनावो। कभी उसके गले में बाहें डालकर उसका मुँह चूमता तो कभी गोदी में बैठकर तुतलाती बोली में अपनी बातें कहता। नौकरानी भी उसका लाड़ करती थी। प्रेम सबों को पास करता है और अहंकार सबों को दूर करता है।

एक रोज नई नौकरानी ने बाईसाहबा से कहा "वह तेल की

पकौड़ियाँ मत खाइये ! वह तेल दिनेश को बाधेगा। उसे खांसी आएगी !"

"तुम पुरानी देवियों की कुछ पगली धारणा !" बाईसाहबा ने कहा "पकौड़ी खाने में क्या होता है ? और यह आलू की पकौड़ियाँ हैं प्याज की नहीं। और अगर खांसी आई तो डॉक्टर हैं दवा देने को !"

"इतने बचपन से क्या डॉक्टर के हवाले करेंगे इसे।" नौकरानी ने नम्र होकर कहा। "रोज बाल सुधा देने से सब ठीक होगा। डॉक्टर है इसलिये क्या बच्चे को जान बूझकर बीमार बनाया जाएगा ? मैं कहती हूँ आपको अब तेल की चीजें नहीं खानी चाहिये। कल से वह राब खाइये। इससे दूध भी होगा और बच्चा भी अच्छा हृष्ट पुष्ट होगा।"

दूसरे रोज सुबह नौकरानी ने अपने हाथों से राब बनाई। उसमें किशमिश और छोहारे के टुकड़े बना डाले। बाईसाहबा को आग्रह-पूर्वक वह खाने को मजबूर किया। नौकरानी का वह प्यार देखकर बाईसाहबा की आँखें भर आई'। तुम मेरी माँ हो ! अगर मेरी माँ होती तो उसने भी इतने प्रेम और ममता से मेरा काम नहीं किया होता। मेरे मां बाप बचपन में गुजरे। मैं यों ही अकेली बढ़ने लगी। प्रेम रहित दुनिया में बढ़ी।"

"आप का कोई नहीं ?" नौकरानी ने सदय हो पूछा।

मैं थी अपने चाचा के पास। वे पढ़ाते थे। मगर उनका स्वभाव कुछ अजीब था। चाची भी भला बुरा कहती थी। मुझे कॉलेज में छात्रवृत्ति मिलने लगी। तब से मैं स्वतंत्र रहने लगी। मैंने सोचा दुनिया में किसी की आवश्यकता नहीं है।"

"ऐसे कैसे चलेगा बाईसाहब !" नौकरानी ने कहा—"दुनिया में अपना कोई होना चाहिए। जिसे अपना ऐसा कोई नहीं है उसका जीवन दूभर हो जाता है।"

"मैं भी महसूस करने लगी वह बात ! मैं परीक्षायें पास होती थी।

किससे कहूँ ? किसे बताऊं अपना आनंद ! चाचा साहब मुझसे खुश नहीं थे। चाची भी डाह रखती थीं। मैं चुपचाप अपने कमरे में बैठ कर रोती थी। अपनी खुशी भी सहन नहीं होती थी।"

"अब तुम्हें अपना आदमी मिला है। बालासाहब आप को मिले हैं। यह अमूल्य रत्न मिला है।"

"जी मैं सुखी हूँ। भगवान ऐसा ही सुखी रखें !"

घर का सभी काम वह करती थीं। बाईसाहब के बिछौने पर की चद्दर धोना, गिलाफ, धोती, जम्फर, बच्चों के कपड़े, सब कुछ वह धोती थी। कभी कभी बालासाहब का पाजामा भी धोती थीं। काम करते समय वह अनोखा आनंद महसूस करती थीं। अपने लाड़ले का वैभव देखकर वह माता आनंद विभोर हो जाती !

कभी कभी पिछली बातों का स्मरण हो आता था। अपमान की वेदना दिल को टीसती थी। आँखों में खून उतर आता था। मगर क्षणभर में वह शांत होती थी। प्रेम ! वह महज देना जानता है लेना नहीं ! वह बदला नहीं चाहता। न चाहता मान न दान। वह अपने प्रेम की स्वीकृति भी नहीं चाहता है जिस पर हम प्रेम करते हैं वह सुखी है, इसमें प्रेम संतुष्ट है। वह देखकर प्रेम अपना दुःख भूल जाता है। अपनी प्रेम मूर्ति का भाग्य वैभव सब अपना ही है ऐसा अनुभव होता है। प्रेम में द्वैत नहीं। अभिमान नहीं। अहंकार नहीं निरपेक्ष जीवन ही सच्चा प्रेम कर सकता है।

एक दिन की बात है। नौकरानी दिनेश को झूलन में डालकर झुलाती थी, गीत गाती थी। आजकल बाईसाहब घूमने फिरने जाती थी। वह अपने बालासाहब के साथ टहल कर लौट आती थी। अंदर नौकरानी गीत गा रही थी। बालासाहब वह गीत सुनकर चौंक पड़े। हृदय की पुरानी स्मृति जाग्रत हुई। उसने तूफान मचाया 'यह नौकरानी जी जान से काम करती है न ?' "जी ?" मालती ने कहा मुझे अब तेल लगाती है मैं महसूस करती हूँ मेरी माँ है ? कितना प्यार ?

कितनी सभ्यता ? बच्चों का सब वही करती है। नरेश उसको छोड़ता भी नहीं। दादी ! दादी ! कर वहीं मंडराता रहता है। मुझसे कहती है पकौड़ी खानी नहीं चाहिए। सुनकर मुझे हँसी आती है। मगर उसके प्रेम के सामने झुक जाती हूँ। सुबह जब राब लाती है वह मुझे नहीं भाती मगर मैं इन्कार नहीं कर सकती। उनकी साड़ी फट गई है। उनको एक साड़ी खरीद देनी चाहिए। वह दूसरों की पहनी साड़ी नहीं पहनेंगी। नई खरीदनी चाहिए।" "हाँ !" बालासाहब ने कहा खंडू से कहो। वह अच्छी साड़ी ले आयेगा। "उनसे पूछना किस रंग की साड़ी वह चाहती हैं ?"

बालासाहब के दिल में हलचल मचने लगी ! वह बाल गीत, वह आवाज, हृदय की तार छिड़ गई ! विस्मृति गान पुनः जाग्रत हुआ। वह झट उठकर नीचे गए। वह जानबूझ कर नीचे गए। नौकरानी दिनेश को झुला रही थी। बालासाहब को देखते ही नौकरानी उठकर दूर जा खड़ी हुई। बछड़े को देखकर गाय दूर गई ? बालासाहब ने नौकरानी को ठीक देखा एक बार ! "आपके दूसरा कोई नहीं है ? आप क्या अकेली हैं ? आपने अब तक पगार क्यों नहीं लिया ?" पगार लेकर किसे भेजना है मुझे ? मेरा अपना कोई नहीं है ? यहाँ खाने को जो मिलता है। और क्या चाहिये मुझे ? बाईसाहब मेरा सब देखती हैं। किसी की फिक्र नहीं। और काम करते समय जो आनंद मिलता है वह क्या पगार से कम है ?" इतने में दिनेश उठा। वह झूलन के पास जा दिनेश को गोद में ले गाने लग गई।

बालासाहब अपने कमरे में आये। उस रोज से वह गहरे विचार सागर में डूब गये। न हंसते न खेलते। उनका स्वभाव गंभीर होने लगा, विमनस्क रहने लगे। बाईसाहबा ने पूछा एक रोज; आप ऐसे खिन्न क्यों रहते हैं आजकल ?"

"कुछ नहीं !"

"आप मुझसे छिपाते हैं !"

"अं ?......ना, छिपाने की क्या बात ?" विमनस्क होकर बोले वह।

"आपको कुछ न कुछ दुःख है! आपके दिल में कोई बात चुभ रही है।"

"जी! आजकल देश में म० गांधी का आंदोलन शुरू होने जा रहा है। छोटे छोटे बच्चे अपने देश की आज़ादी के लिये लड़ेंगे। उनको सजा देना मेरे नसीब में आया है। इसलिए मैं चिंतित हूँ।"

"इसमें क्या है ?" बाईसाहबा प्रेम और गांभीर्य के साथ कह उठीं" नौकरी का इस्तीफ़ा देकर किसी खानगी संस्था में प्रोफेसर बन जाइये। मैं भी कहीं कन्याशाला में नौकरी करूंगी। दिल को दुःखी रखनेवाली नौकरी किस काम की ?"

"नौकरी छोड़ने पर यह भाग्य कैसा रहेगा ? नौकर चाकर मोटर टांगा, वगैरह कहां रहेगा ? माता की तरह सेवा करनेवाली नौकरानी कैसे मिलेगी ? तेरा कैसे होगा ? तुझे तो खुद अपने कपड़े धोने पड़ेंगे। मेरे कपड़े भी धोने पड़ेंगे। नरेश दिनेश के कपड़े धोने पड़ेंगे। रसोई करनी पड़ेगी। यह सब काम तुझसे कैसे होगा ? दो दिन में मुर्झा जाएगी तू!"

"कुछ नहीं मुर्झा जाती! सीता देवी से क्या मैं कोमल सुकुमार हूँ ?"

"सीता की क्या बातें करती है ? न तू सीता है न मैं राम! हम तो अपने सीधे सादे आदमी हैं!"

"देश बंधु की वासंती देवी मुर्झा गई ? लखपती की रानी मगर लगी न कंबल पर सोने ? मैं भी कष्ट सहन करूंगी। किसी भी हालत में सुखी रहूँगी।" खुश रहूँगी। मेरी मनोदशा भी बदलने लगी है। इस दिनेश के जनम से न जाने क्यों एक प्रकार का बदल होने लगा है। इस नई बाई के हाथ में गुण है शायद! वह लड्डू बना देती हैं। राब बना देती हैं। मैं कुछ अधिक नरम होने लगी हूँ। पता नहीं उनके हाथों में, देखने में, बोलने में, क्या जादू है। मेरा अभिमान अहंकार सब

कुछ उतर गया। दो रोज की बात है। खंडू ने कांच की बरनी तोड़ डाली, मैं उनपर खफ़ा होनेवाली थी। पता नहीं नई बाई के इन शब्दों ने "जाने दो। बाई साहब कुछ नहीं कहेंगी। कोई जान बूझ कर क्या किसी का नुकसान करता है? हाथ से फिसल गई। अच्छा! मगर वह टुकड़े ठीक संभालकर उठाना। नहीं तो बच्चे घूमते फिरते हैं। कहीं घुस जाएँगे!" मुझे शांत कर दिया। वह इतना कहकर ही चुप नहीं रहीं मगर खुद कांच के छोटे छोटे टुकड़े उठाने लगीं। मैं खंडू पर खफ़ा नहीं हो सकी। कुछ लजा गई। तो क्या नौकरी छोड़ देंगे? बाई साहबा ने अपने पति का हाथ अपने हाथ में लेकर कहा, तय करो!"

वह बातें वैसी ही रहीं। एक दिन रविवार को सुबह बाईसाहब के साथ शतरंज खेलने बैठे थे बालासाहब। नीचे एक तैलंगी ब्राह्मण आया। "अरे चल वहाँ से! यहाँ क्या दक्षिणा मिलेगी तुझे? यहाँ साहब रहते हैं!" खंडू ने कहा। मोत्या भी भूंकने लगा। ब्राह्मण जरा चिपकने वाला था। "दूर का ब्राह्मण है। वेद कहता है। यजमान ऊपर दीखते हैं।" वह अपनी वृत्ति दिखाने लगा। बालासाहब ने ऊपर से फर्माया "आने दो उनको"। जी हुजूर कहते वह गया। ब्राह्मण देवता को ले आया।

यह वेदों नारायण बैठक के एक कोने में डरते दबकते बैठा। बालासाहब ने आसन लगवाया। वेदों नारायण का सम्मान किया। ब्राह्मण वेद मंत्र कहने लगा।

या आपो दिव्या उतया स्वयं जाः।

या आपो वहन्ति उतया खनित्रिमाः॥

"जटा पाठ घन पाठ वगैरह कहिये!" बालासाहब ने कहा।

"आप बड़े हैं। आप वेद जानते हैं।" वह कहने लगा।

अग्निः मीले पुरोहितं यज्ञस्य देव मृत्विजम्

होतारं रत्न धातमम्।

अग्निः पूर्वे मिहिसीर्मिडयो नून नेततः। सदेवा अहे वसंति॥

वह घन पाठ जटा पाठ वगैरह कहने लगा। मंत्र कहते कहते वह ब्राह्मण ऐसा तेजस्वी दीखने लगा बस बालासाहब की आँखों में आँसू आये। उन्होंने ब्राह्मण को पच्चीस रुपया दक्षिणा दी। नमस्कार किया। ब्राह्मण ने आशीर्वाद दिया। आयुष्मान भवतु—पुत्र पौत्र भाग्यवान् भवतु, शांतिरस्तु, पुष्टिरस्तु, तुष्टिरस्तु, श्रीरस्तु, धीरस्तु, आयुष्यमस्तु, मंगलमस्तु, वगैरह शतमुखी आशीर्वाद देकर गया वह ब्राह्मण।

"इस प्रकार समग्रवेद पाठ को याद रखना क्या समय का दुरुपयोग नहीं है?"

अपनी प्रिय पत्नी के सवाल के जवाब में कहा बालासाहब ने मैकॉले को मिल्टन का "पैराडाईज लास्ट याद था। तो हम उसकी तारीफ करते हैं। साहब करता है सब अच्छा करता है। हम करते हैं सब बुरा करते हैं ऐसा तो नहीं है? जो पवित्र है, सुंदर है, उसे पाठ करने में एक प्रकार का दिव्य आनंद है। ज्ञानेश्वरी में एक जगह ज्ञानेश्वर महाराज कहते हैं "उन्होंने अपने मुख में ब्रह्मशाला चलाई है।" वाङ्मय तप किया। कितना सुंदर!

"मालती! ब्राह्मणों के कितने उपकार हैं? हजारों साल ज्ञान उन्होंने अपनी जबान पर संग्रहकर सुरक्षित रखा। किसी ने वेद पाठ कर रखा, किसी ने शास्त्र, किसी ने काव्य, तो किसी ने व्याकरण! प्राचीन संस्कृति धर्म इतिहास सब संभालकर रक्खा। स्मरण शक्ति और पाठ शक्ति सतेज रखने के लिए उन्होंने अपना जीवन सात्विक और शुद्ध रखा, आहार विहार में संयम रखा, विलास से दूर रहे।

मालती! मेरे पिता जी इसी प्रकार वेद पूजक थे। सुबह सुबह उठकर वे वेद पाठ करते थे। कितनी गंभीर मीठी तेजस्वी और सुंदर वाणी! वेद वाणी कितनी तेजस्वी और भावनोत्कट है! वह त्रिसुपर्ण और रुद्र कितने उदात्त हैं। वह ऊषा सूक्त कितना प्रभावशाली और प्रतिभा पूर्ण है! हम उन ब्राह्मणों का जिन्होंने ज्ञान भंडार अबतक

जतन कर रखा उपहास करते हैं। आज जिस सांस्कृतिक अभिमान से भारत को गुलाम होने पर भी संसार में मान है उस संस्कृति का वह दिव्य ज्ञान वेद, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, वेदांत वगैरह इन ब्राह्मणों ने जतन कर रखा है। इसलिये उन्होंने और व्यवसाय छोड़े। वैभव को विष समझा। मैं इनकार नहीं करता हूँ, ब्राह्मणों में दोष भी हैं। दोष नहीं किसमें ? सभी दोषी हैं! इसलिये क्या उन संस्कृति-रक्षकों का कृतज्ञता पूर्वक आभार नहीं मानेंगे ? हमारे हिंदुस्तान के देहातों में वह चलते-फिरते ज्ञान कोष और चलते-फिरते वेदों नारायण रहते थे। अब भी होंगे। जब कोई मैक्समूलर आकर उनका कदम चूमता है तब हमें उनकी कीमत समझ में आती है। मालती!......।" वह रोने लगे।

"क्या हुआ आपको ? ऐसे क्या करते हैं? कहो न क्या बात है।" मालती ने साग्रह प्रेम से पूछा।

"क्या कहूँ मैं मालती! बालासाहब बोलने लगे बिलखते हुये, मेरे पिता जी भी ऐसे ही एक वेदों नारायण थे। वे भी इसी तरह घूमते थे। वे मेरी पढ़ाई के लिये घूमते थे, भटकते थे! उनका कितने ही जगह ऐसा अपमान हुआ होगा। कितने ही अमीरों के नौकरों ने हाथ पकड़ कर निकाल दिया होगा। कितनों ने गालियाँ दी होंगी। उन्होंने सब सहन किया, बरदाश्त किया। उन्होंने मुझे सिखाया, पढ़ाया, बढ़ाया और मैंने उनको अपने आँगन में से भी निकाल दिया। हमारे सिपाही ने उन्हें हाथ पकड़ कर निकाल दिया। मैंने ऊपर से देखा। मैंने कुछ भी नहीं कहा। क्या तुझे याद है वह दिन ? हम नरेश से खेल रहे थे। एक बूढ़ा ब्राह्मण "मेरा बाल है क्या यहाँ ?" पूछते आया था। वही मेरे महान पिता जी थे। कामधेनु मेरे दरवाजे पर आई, मैं साहब ने साहबी नशा में उन्हें घर से निकलवा दिया! मुझे उन्हें अपने घर में लाकर पालागन करने की लज्जा महसूस होने लगी! मालती! मैंने एक पुस्तक पढ़ी थी, जब मैं इंग्लैण्ड में था। इजिप्ट के बारे में थी वह। इजिप्ट में अंग्रेजी शिक्षा का प्रारंभ किया गया। उसके

परिणाम के बारे में एक अंग्रेजी अधिकारी कहता है। There will be then a race of brown Englishmen इजिप्शियन लोग भूरे रंग के अंग्रेज होंगे। आज भारत में वही हुआ है मालती! हम अंग्रेज दिल के गुलामी हिंदुस्तानी बने हैं। हमारा सब कुछ उनकी नकल हो गई है। न वहाँ के न यहाँ के। नकली देशी साहब बने हैं। हम सूट-बूट वाले पुराने धोती कुरते वालों को नीच समझते हैं, तुच्छ समझते हैं। अंधे! मालती मैं भी अंधा तू भी अंधी!! तू कहती थी "उस राजापुरी भट्टजी के पास मुझे मत ले जाना!" मैं तेरा गुलाम बन कर वह सब मंजूर फरमाता आया। रानी सरकार के राज में सब अपने माँ बाप को भूलते आये! मैंने एक पत्र भी उनको नहीं लिखा। मैं कृतघ्न हूँ। विद्यांध, रत्तांध, मदांध और कामांध! हम दोनों कर्तव्य भ्रष्ट हुए, पतन की ओर बहते गये। अब न रोऊँ तो क्या करूँ? यही दुःख है जो मुझे शूल-सा सालता है। खाना पीना हराम है। नींद का नाम तक नहीं! कहाँ हैं मेरे माता पिता? उन्होंने मुझे पाला गले का तावीज बना कर! मेरा लालन-पालन किया और मैंने क्या किया? कहाँ है वह माता-पिता? कहाँ हैं तेरे सास ससुर? नरेश दिनेश के दादा दादी कहाँ हैं? "इन बालकों का खेल देख कर उन्हें कितनी खुशी हुई होती? कितनी शांति मिलती!"

"हमने गुनाह किया।" मालती ने कहा हम उनकी क्षमा मांगेंगे। उनको अपने घर में लाकर पूजा करेंगे। अब रोइये मत। आपको मैंने अंधा बनाया। आपके शब्दों से मेरा दिल फट गया है। मैं क्या कहूँ? क्या बोलूँ? दोष अगर किसी का है तो मेरा है। अब क्या किया जा सकता है? अब हम खोजें उनको। जहाँ कहीं हों अपने पास ले आएँ। क्षमा मांगे। उनकी आज्ञा में, उनकी सेवा में रहें।" मालती का दिल डोल उठा। वह दबी आवाज में बोलती थी। जबान से नहीं दिल से बोलती थी।

"अब कहाँ से लाएँगे? मालती! वह गये। मेरे पिता जी गये

हमें छोड़ कर। वह मुझे छोड़ कर भगवान के पास गये। वह अपमान, दुःख, शोक से तड़फते हुए गये इस दुनिया में से। कृतघ्नता रूपी दूसरा छुरा नहीं है। दुनिया के सभी प्रकार के अपमान पिता जी ने सहन किये; मगर उनकी ओर से किया हुआ अपमान वह नहीं सह सके जिनके लिये उन्होंने सब कुछ सहन किया था। वह कैसे सहन कर सकते थे यह निराशा? कैसे सहन कर सकते थे यह अपमान? कितनी घोर निराशा! दुःख से जल गये होंगे वह! जन्म भर कष्ट और तप से थका हुआ उनका शरीर मेरे इस अपमान से जल गया होगा। मालती! तेरा पति पितृघातकी है! ओह! क्या किया मैंने!......!"

"नहीं होंगे! वे क्या अपने लाल पर खफ़ा होंगे? आपको हवा के साथ अपना आशीर्वाद भेजते होंगे। हम जाकर ले आवेंगे उन्हें। आँसुओं से उनकी चरण पूजा करेंगे। दोनों उनकी क्षमा मांगेंगे। प्रेम सदा क्षमा करता रहता है। न मांगते क्षमा करता है वह। वह प्रेमी आत्माएं हम पर कृपा करेंगी। आप क्यों अशुभ सोचते हैं? कोंकण में पत्र लिख कर पूछ-ताछ करेंगे।" मालती अपनी स्नेह सनी मीठी बानी से बोल रही थी।

मैं जानता हूँ मालती! वह गये। इसमें शक की गुंजाइश भी नहीं है। इसमें शक नहीं वे मेरी दिल से प्रार्थना करते गये होंगे! मगर वह अपमान वह सह नहीं सके। पिता जी गये। अब माता जी कहाँ होंगी?......वह फिर रोने लगे।

आप थोड़ी छुट्टी लीजिये। हम कोंकण में चलेंगे। वहाँ वह मिलेंगे। अपना प्रेम पूर्ण हाथ हमारे मस्तक पर रखेंगे वह! वह नरेश, दिनेश को गोद में लेंगे। हमें आशीर्वाद देंगे। मुझे क्षमा करेंगे। चलो! हम कोंकण में चलेंगे!

ना! हम माँ को नहीं खोजेंगे। हम पापी थे वह गयीं। वह आएगी हम पवित्र होंगे तब। हम मस्त हुए वह गयीं। हम कृतघ्न मदांध बने तब वह गयी। हम कृतज्ञ होंगे अहंकार शून्य होंगे तब वह

आएँगी। हम आज से निरहंकार होने की कोशिश करें। प्रेम करने सीखें। हम नम्र बनें। पश्चात्ताप से शुद्ध बनें। उस रोज जिस रोज हम पवित्र होंगे मेरी माँ मुझे मिलेगी। भृंग पास ही रहता है मालती! कमल के खिलते ही वह गुनगुनाने लगता है। शत शत आशीर्वाद देकर उसका गान गाने लगता है। मालती! मेरा हृदय प्रेम कृतज्ञता पावित्र्य से भरने दे। सजने दे। माँ आएगी। निश्चित आयेगी।

× ×

अंतःकरण के दुःख से बालासाहब जलने लगे। वे खिन्न और उदास रहने लगे। गंभीर और विमनस्क रहने लगे। "मेरा हृदय शुद्ध होगा? प्रेम से भर जायगा, तब माँ का दर्शन होगा?" यह वाक्य वह बार बार कहते कहते वह कचहरी जा पहुँचे; वहाँ सबों से प्रेम और निराभिमान होकर बरतने लगे। वह आज कल अगर्वता और नम्रता की मूर्ति बने थे। क्लर्क और चपरासी लोग हैरान थे। कभी कोई दुष्टता का मुकदमा सामने आता तो कहते थे "चार रोज इस दुनिया में जीना है। प्रेम से क्यों नहीं रहते? यह द्वेष शोक क्यों? मुसीबत नफरत किस बात की?" बालासाहब का यह परिवर्तन देख कर सबों को अचरज होता था। उन्होंने अपनी ऐंठ छोड़ दी। दफ़्तर में भी पैदल आते जाते। रास्ते में कोई भिखारी, अंधा, लूला मिलता तो उसे कुछ न कुछ ज़रूर देते।

उनके जीवन में सादगी आई, साधुता आई। उन्होंने खादी का व्रत लिया। मालती भी खादी पहनने लगी। क्लब में भी जब वह जाते तो कहते "खादी आज का युगधर्म है। सरकारी अधिकारियों को तो खादी पहनना ही चाहिये। गरीबों की सेवा ही सरकार का कर्तव्य है। बड़े लाट भी खादी को उत्तेजन देने को कहते हैं। पंजाब सरकार ने खद्दर की उपयुक्तता मंजूर करली है। खादी पहनने में राज द्रोह नहीं है मगर न पहनने में प्रजा-द्रोह है, देश-द्रोह है?" बाला-साहब की बातें सुनकर लोग हैरान होते थे।

एक रोज घर में आते समय चर्खा ले आये। सूत कातना सीखने लगे। क्लब में भी चरखा लाये। "हम यहाँ चरखे भी रखेंगे। चरखे का संगीत भी सुंदर संगीत है। सूत कातने में आनंद है। हम उसके सूत से गरीबों से एक रूप हो जाते हैं" कुछ हँसे, कुछ ने सर हिलाया, किसी ने प्रशंसा की। बालासाहब चुपचाप कातते बैठे।

मगर अब तक मन शांत नहीं हुआ था। माता जो पास थी नहीं मिली थी। वह अभी अहंकार शून्य नहीं हुए थे। इस आन्तरिक संघर्ष का मन पर असर हुआ ही। वे बीमार पड़े। मगर काम पर जाते थे, कचहरी जाते थे। एक रोज कचहरी में चक्कर खाकर गिर पड़े। सभी घबड़ाये। मोटर में घर लाये गये। डॉक्टरों का इलाज शुरू हुआ। बुखार आने लगा। बालासाहब शय्या सेवी बने। मालती का दिल रोने लगा।

"राधाबाई! बच्चों को शांत रखो। दिनेश को रोने न दो। नरेश को चिल्लाने मत दो। तुम बच्चों को लेकर नीचे ही रहो। इन्हें तो नींद बिलकुल नहीं आती है, बुखार नहीं उतरता, दिन भर सोचते रहते हैं। पता नहीं क्या चिंता है! क्या करूं मैं अब?" मालती एक बच्ची सी रोने लगी।

"रोइये मत!" नौकरानी ने कहा भगवान दया करेंगे। जो कुछ होता है भलाई के लिये होता है। आपका ममतापूर्ण स्वभाव, आपका पुण्य उन्हें अच्छा करेगा। आपको रात भर जगना पड़ता है। मैं जा बैठूँ वहाँ? आप जरा आराम कीजियेगा। आप भी अगर बीमार पड़ीं तो कैसे चलेगा? बच्चों को कौन देखेगा? अगर आप और साहब को बुरा न लगे तो मैं बैठूँगी ऊपर साहब के पास। नहीं तो भी मुझे नींद कहाँ आती है? मैं बालासाहब की सेहत सलामती के लिये प्रार्थना करती रहती हूँ, जाप करती रहती हूँ। बैठूँ मैं ऊपर? अगर आप हाँ कहेंगी, तो बैठूँगी। जो कहेंगी वह दवा दूँगी। अगर कुछ कम बेशी हुआ तो आपको उठाऊँगी। बैठूँ मैं वहाँ?

"बैठिये न! आप क्या परायी हैं? और मेरा बिना आप के और

कौन है ? उन बच्चों की सेवा कितनी जी जान से करती हैं आप ?” मालती बालासाहब के पास गई। वह रो रहे थे। उनके तकिया का गिलाफ गीला हो गया था आँसुओं से। मालती गद्गद होकर कहने लगी। यह क्या है ? कितने रोओगे ? नहीं ! ऐसा बार बार आँसू नहीं बहाइये। मिलेगी माँ ! जरूर मिलेगी ! क्या भगवान के घर इन आँसुओं की कोई कीमत नहीं है ?” मालती ने अपने अंचल से पति की आँखें पोंछी। पर वह खुद रो पड़ी। बालासाहब बिलखने लगे। मालती नीचे आई। “राधाबाई ! क्या करूं मैं ? वह तो दिन रात रो रहे हैं। क्या तुम भी कोई उपाय सुझाओगी ? संतू जा डॉक्टर को बुला ला ! बाई ! तुम कुछ न कुछ कहो उन्हें !”

“बालासाहब ! रोइये मत ! ऐसा रोना अच्छा नहीं। शांत पड़े रहिये। भगवान भला करेंगे। विश्वास कीजिये। आप तो पढ़े लिखे हैं। आपको हम क्या कहेंगी। आँखें पोंछ कर चुपचाप पड़े रहिये !” राधा बाई ने कहा। नौकरानी ने अपने मालिक से कहा। बाला साहब ने आँखें पोंछी। वह स्थिर दृष्टि से उनकी ओर देखने लगे। उठने की कोशिश करने लगे।

“देख वह उठने लगे हैं !” मालती ने कहा

“यह क्या ? उठो मत ! ऐसे क्यों देखते हैं आप ? क्या चाहते हैं ? किताब ? मैं ला देती हूँ ! डॉक्टर ने उठने को मना किया है न ? मालती ने उठने वाले पति को मना किया। नौकरानी नीचे चली गई। मोक्ष का समय नहीं आया था अभी। अहंकार का राहु प्रेम के चंद्रमा को निगलने आता था। अहंकार की हत्या के प्रथम प्रेम मूर्ति माता का दर्शन कैसे ? तब तक जब तक दृष्टि प्रेम से नहीं साफ होगी माता का दर्शन कैसे ? अंधे को नजदीक होने पर भी सभी दूर ही है !

दरवाजे पर डॉक्टर की मोटर आ रुकी। मालती ने फिर से बाला-साहब की आँखें पोंछी अपने अंचल से। गो कि वहाँ अनेकों रूमाल थे। मगर अब अकृत्रिम निरहंकारी प्रेम सीखने लगी थी वह। प्रेम की

कलाएँ दीखने लगी थी। झलक दीखने लगी थी।

डॉक्टर! दिन भर रोते रहते हैं। पता नहीं क्या होता है। अगर शांत पड़े रहेंगे तो नींद लगेगी। कुछ आराम मिलेगा। क्या और ऐसा कोई औषध नहीं है? मालती ने पूछा—

"बालासाहब! कहाँ दूखता है? क्या खास दर्द किसी जगह होता है?" डॉक्टर अपने थेटैस्कोप से देखने लगे। मगर दिल की कसक वह रबड़ क्या दिखाएगा? "ऐसी कोई बात नहीं है। बचपन की याद आकर रोना आता है!" बालासाहब ने कहा।

डॉक्टर ने औषध दिया। मालती पिलाने आई। "आ करो!" मालती ने कहा। "मैं नहीं चाहता वह दवा! वह तो ब्रोमाईड है माले! गुंज करनेवाली दवा। जाग्रत होनेवाले जीव को यह गुंज करनेवाली दवा किस काम की? रोने दे मुझे। यह रोना मुझे शुद्ध करता है। मातृ दर्शन की तैयारी कराता है। वह डॉक्टर कैसे समझेगा यह आँसू? इनकी कीमत कौन करेगा? इसका निदान कौन करेगा? भगवान के लिये तड़फने वाले ध्रुव के अश्रु प्रह्लाद ही जान सकेगा। तुलसीदास के अश्रु तुकाराम समझ सकेगा। स्वराज के लिये तड़फने वाले सुभाष के आँसू जवाहर समझ सकेगा। महात्मा जी के अश्रु गुरुदेव समझ सकेंगे। मां को देखने के लिये तड़पने वाले के आँसू क्या तू पोंछ सकेगी? यह मेरा पाप पर्वत बहाकर ले जाते हैं। जीवन शुद्ध होता है। शायद आँखें सूख जाएंगी मगर दिल प्रेम से हरा-भरा होगा। हृदय में प्रेम का तूफान आएंगा। मालती वह डोज़ मत दे। वह जहर सा लगेगा मालती! नशा लाएंगा वह, नींद नहीं! मैं ऐसा ही चुपचाप पड़ा रहूँगा। इस तकिया को मां की गोद समझूंगा। मालती मुझे रोने दे! तू भी रो! मेरे साथ तू भी आँसुओं से अपना जीवन शुद्ध कर!" कहते कहते बालासाहब की आँखें भर आयीं।

"आप को हमारी दया नहीं आती।" मालती ने कहा "हमारे लिये लीजिये यह दवा! यह क्यों? लो! कुछ आराम मिलेगा। आ

करो !" मालती प्रेम और वात्सल्य से कह रही थी। बालासाहब ने "आ !" किया। मालती ने दवा पिलाई। उसके बाद थोड़ा मोसंबी का रस पिलाया। "अब सोजाओ आँखें बंद कर ! चुप चाप सोना।" इतना कहकर अपने पति पर ओढनी ओढाती हुई वह नीचे गयी।

राधाबाई दिनेश को नचा रही थी। मालती ने उसे अपने पास लिए "आ मेरे नन्ने राजा !" उसे पिलाया। अब नहीं रोना बेटा ! बाबू जी सो गये हैं। तू रोएगा तो बाबू जी की नींद खुलेगी !" " राधाबाई नहलाकर सुला देना राजा को ! " अब अच्छा लगता है न ?" राधाबाई ने पूछा "डाक्टर ने क्या कहा ? नींद लगी ? " "डाक्टर ने दवा दी है !" मालती ने कहा "दवा नहीं लेते थे। बीमार आदमी जिद्दी बच्चे की तरह होता है ! मीठी मीठी बातें कर दवा पिलाई। अब लगेगी नींद। बच्चों को बिलकुल रोने मत देना !" "खाना तैयार हुआ है ?" रसोईन से पूछा। "जी" रसोइन ने जबाब दिया।

दिनेश को राधाबाई के पास देकर मालती नहाने गयी। राधा-बाई दिनेश को तेल लगाने लगी। उसे नहलाया, पोंछा। झूलन में सुलाकर गीत गाने लगी।

ओ ओ ओ लल्ला की बीबी आने दो।

ओ ओ ओ बाबू जी चंगे होने दो।

दिनेश सो गया। "सो जा अब। अच्छा दो तीन घंटे सोना।" कहकर राधाबाई दूसरे काम के लिये चली गई।

रात के ६ बज चुके थे। नरेश अपनी छोटी सी गादी पर सो गया था। दिनेश अपने झूलने में सोता था। खंडू और दूसरा सिपाही बाहर सो गये थे। रसोईन अंदर सो गयी थी।

"जरा तुम बैठो राधाबाई !" मालती ने कहा "मुझे झपकी सी आती है। जरा लेट जाती हूँ। कुछ कमवेशी हो तो उठाना मुझे !

"सो जाइये आप !" राधाबाई ने कहा "रोज रोज आप को जागना पड़ता है। मैं बैठती हूँ। बे फिक्र सो जाइये।"

मालती वहीं सो गयी। राधाबाई! जरा वह शाल ओढा दीजिये न! आज मेरा बदन भी जरा दुखता है। हाथ पैर जरा खींचते हैं। "क्या जरा पैर दबादूँ मैं?" राधाबाई ने पूछा। "जी!" मालती ने कहा। सास बहू के पैर द······नहीं नौकरानी मालकिन के पैर दबाने लगी। "नीचे ऊपर चलने से पैर दर्द करते हैं।" मालती को नींद आई। वह सो गयी। पलंग पर बालासाहब सो गये थे। वहीं दूसरी चारपाई पर मालती सोई थी। राधाबाई गले की माला हाथ में लेकर जाप करने लगी। भगवान को पुकारने लगी। उनका दिल भर आया था। "इन्हें खुश रख भगवन! इनके अपराध क्षमा कर। मैं तो कब की भूल गयी हूँ। तू जगन्माता है न? परम दयालू! अमृत से मीठी और चन्द्रमा से शीतल। मेरे इस इकलौते बेटे को भला कर। उसे क्षमा कर!" मातृ हृदय रो रहा था।

मालती एका एक जग गई। "सो जाइये आप। वह सोए हैं।" राधाबाई ने कहा "ना! तुम सो जाओ अब! मैं बाद में सो जाऊंगी।" मालती ने कहा "मन में एक बात आई है कहूँ मैं?" राधाबाई ने पूछा। "क्या है? कहिये न!"

मालती ने कहा।

"कोंकण में राजापुर के पास देहात में एक देवी है। उस देवी का अंचल भरने की मनौती कीजिए।" राधाबाई ने कहा। "वहीं किसी गाँव के रहनेवाले हैं ये! कोई गलती हुई होगी। देवी की अब कृपा हुई होगी।" कहकर मालती ने मनौती की।

मालती ने राधाबाई को सोने का आग्रह किया। मगर राधाबाई ने मालती को सोने के लिये मजबूर किया। राधाबाई ने कहा बाई साहेब! आपका बदन कुछ गरम लगता है। आप बालबच्चे वाली हैं। संकोच किस काम? मुझे योहीं नींद नहीं आती।" वगैरह कह कर प्रेम से उसे सोने को मजबूर किया।

× ×

कुकड़ूँ कूँ कुकूँ ! मुर्गा कह रहा था अब भगवान् सूर्य आस्मान में आयेंगे। अंधार में से उषा आयेगी। मानवी हृदय की अमर आशा वह बोल रहा था। राधादेवी की आँखे सजल थीं। हाथ में जयमाल तो आँखों में अश्रुमाल। क्या अपने पतिदेव का स्मरण कर रही थी वह? खुद की हीन दीन स्थिति का दुःख था? अपना बाल दुःखी है, करीब है, फिर भी उसके पास नहीं बैठ सकती, उनका मस्तक गोद में नहीं ले सकती, इस बात का दुःख था। क्या वह भगवान की प्रार्थना कर रही थी? बाहर दवबिंदु और अंदर अश्रुबिंदु टपक रहे थे। शीतल मंद पवन आ रहा था। खिड़कियाँ खुलीं थीं। उसमें से आस्मान के तारे दीखते थे। थोड़ी सी रात थी अभी। देख वह श्रवण नक्षत्र! माँ बाप को कंधों पर बिठाकर यात्रा करानेवाला वह मातृ पितृ भक्त श्रवण! बचपन में गोविंद भट्ट जी ने वह नक्षत्र दिखाकर रामायण की कथा सुनाई थी। बालासाहब जाग चुके थे। वह उस श्रवण नक्षत्र को देख रहे थे। वह सोच रहे थे। जिस भारत में श्रवण जैसा पितृ भक्त पैदा हुआ उस भारत में मुझ जैसा पितृ द्रोही को कहाँ स्थान? कोयला और हीरा! वह हीरे का सा चमकता है मैं कोयले का सा जलता हूं। बालासाहब की आँखों में से तारे से आँसू चमके। सामने चटाई पर माता जयमाल लेकर मृत्यु को रोक रही थी। राम के सामने यम कैसा? प्रेम के हथियार से यम पर विजय पाना चाहती थी। माँ बचपन में मक्खन मिश्री देनेवाली मां अपने खून का दूध बनाकर पिलाने वाली मां। गीत गाकर सुलाने वाली माँ! गोद में लेकर थपकियाँ देनेवाली माँ! अंगारा, हलवा, मिठाई भेजनेवाली वह मां आज अपनी संतान के प्रेम से पागल हो, उसके घर नौकरानी बन जी रही थी। बच्चे के कपड़े धोनेवाली मां! बापके खफ़ा होने पर अपनी वकीली करनेवाली मां! वह प्रेम मूर्ति, त्याग मूर्ति, क्षमामूर्ति, तपस्वीनी मां!! बालासाहब गदगद हो गये। बाला-साहब फिर से एक बार बाल बन गये। साहबी नशा उतर गया। वह

उठे। अपनी गद्दी पर बैठे। कहीं कुछ भी आवाज़ नहीं। सारा संसार शांत था। "कुकड़ूँ कूँ कुक !" अंतरात्मा की आवाज सा वह मुर्गा पुकार उठा। अब निशा जाकर उषा आवेगी। अंधार जाकर प्रभात आयेगा। गोया यही कहता था वह मुर्गा। बाल उठा। अपने साहबी नशा से वह जाग्रत बाल उठा। अपने पलँग पर से नीचे उतरा।

वह अपनी माँ के सामने खड़ा था। माता के सामने वह बालक खड़ा था। पिघला हुआ पसीजा हुआ बालक ! वह बालक उसका वह कोमल हृदय सहस्र भावनाओं से थरथरा रहा था। मुक्तिकाल नजदीक आया था। अहंकार, अभिमान, मद सब बह गया था। अश्रुओं के महापूर में। गल गया था सब विकारों का कूड़ा करकट। मातृ दर्शन का समय था। वह सारे माया मोह के परदे हट चुके थे।

वह झुका। माँ के चरणों पर मस्तक झुक गया। "माँ ! मेरी माँ !" दिल पुकार उठा। जबान मौन हुई। जवाब में दूसरा हृदय पुकार उठा "बाल ! बेटा !!" बस !

दूसरा क्या है इससे पवित्र ? साहित्य, वाङ्मय, श्रुति स्मृति काव्य सारस्वत सब फीका है इन दो शब्दों के सामने। तुच्छ है, नीरस है।

"मेरी माँ ! मेरा बेटा !!"

शराफत, शिक्षा साहेबी, अहंकार, अभिमान वगैरह कृत्रिम थोथरों से टूटे हुए दो दिल फिर से एक हुए। गुमराह बेटा माँ की गोद में विलीन हुआ। माँ की सूनी गोद भर गयी !

मालती ऊपर के शब्दों से चौंककर जग गयी। "बाल क्या हुआ ? अरे ये नीचे पड़े ! घात हुआ। ऐसे क्या करते हैं यह ? गधापाई ? अब क्या करूँ मैं ?" मालती रोने लगी।

मालती ! घात बात कुछ भी नहीं। गया हुआ होश आया। जवानी के जोश में कभी कभी होश हवा होता है। इतने दिन उस जोश का बाध हुआ था। अहंकार के नशे में था। आज वह नशा उतरा। मालती ! यह है मेरी माँ ! मैंने माँ को नौकरानी बनाया। बाप को

धक्के देकर निकलवाया । माँ ! अब कौन प्रायश्चित करूँ मैं ? मालती ! माताजी से क्षमा मांग ! बाल की आँखे प्रेमश्रु टपकाने लगीं ।

"अब सो जा मेरे लाल ! मैं हूँ तेरी माँ ! तेरी ही हूँ ! माँ को उसका लाल मिला अब । सो जा !" माँ अपने वात्सल्य के हाथों से उसका माथा थपथपाते बोली ।

"तू मुझे अपनी गोद में ले माँ ! मुझे फिर से बाल होने दे । मुझे बच्चा होने दे ! बड़प्पन के यह शूल उतारने दे !"

"हाँ बेटा !" माँ ने उसका माथा अपनी गोदी में लिया । बस अब उठ । गद्दी पर सो जा ।

"ना मैं ऐसा ही बच्चा बना रहूँगा !"

"तो नरेश हँसेगा तुझे ! वह कहेगा इतने बड़े बाबू जी दादी की गोद में सोते हैं !" माँ ने हँसते हुए अपने बाल को उठाया । मालती ने संवारा । दोनों ने पलंग पर सुलाया । माता उनके सिरहाने बैठी । बाल ने अपना माथा माँ की गोद में सुलाया । मालती ने ओढनी चढ़ाई । माँ अपने खोये हुये बालक को थपथपाने लगी ।

झूलन में दिनेश रो पड़ा । "दिनेश उठारी !" दादी ने कहा । आप बैठिये मैं उठाती हूँ और आप के चरणों में गिराती हूँ ! बहू ने कहा । वह दिनेश को उठा लाई । "अरी पगली ! वह रोज ही मेरे पैरों पर है !" "क्षमा कीजिये अपनी बहू को" मालती ने भी अपनी सास के पैर पकड़े "पगली ! जा, बच्चे को गोद में लेकर सोजा !" दादी ने हुकुम दिया ।

ऊपर राधादेवी की गोद में बड़ा बाल सोया और सुपने में प्रेम सृष्टि देखने लगा । नीचे गादी पर मालती की गोद में छोटा बाल सोया था । राधादेवी के आनंदाश्रु पति वियोग के दुःखाश्रु में बदल गये । दुनिया में निर्मल अमिश्र आनंद भी कहाँ है ? प्रकाश के पास छाया तो होगी ही । इसी धूप छाया में मजा है, जीवन का आनंद है ।

राधादेवी मालती बालासाहब नरेश दिनेश अभी कोंकण में आये । देवी की मनौती पूरी की । बालासाहब को कभी घर की चीजों

को देखकर अपने पिताजी का स्मरण होता है। वह अपनी माँ के पास बैठ कर पश्चाताप के आँसू गिराता है। माँ को नौकरानी बनाने का उसे दुःख है। माँ कहती है बेटा! माँ का सच्चा सुख अपने बच्चों की सेवा करने में ही है। अपनी संतान का प्रेम सेवा ही माता की शान है। भाग्य है। वैभव है!

सुना है आज कल बालासाहब इस्तीफा देकर बड़ी माँ की सेवा में लगे हैं। काँग्रेस के आंदोलन में शरीक होकर भारत माता की सेवा करते हैं।

शाम की बूवा !

शाम की बूवा अच्छे खानदान की थी। उसका जन्म भी अच्छे खानदान में हुआ था और ब्याही भी अच्छे खानदान में थी। वह कुल सात बहनें और चार भाई। सभी बहनें अच्छी जगह देख ब्याही गयी थीं। सीता बूवा के मायके में खूब जमीन थी। घर में चार आठ नौकर थे। रोज कोई न कोई मेहमान आता जाता रहता था। मशहूर खानदान था वह।

शाम को अभी याद है उसके सीता बूवा के पीहर की अमीरी। उसके पतिदेव का नाम रामचन्द्र पन्त। सारंग गांव में रहनेवाले। सारंग गांव में रामचन्द्र पन्त को कितना मान था ? उनके बड़े बड़े बाग ! नारियल, सुपारी, कटहल, चिक्कू, केला, अनानास वगैरह ! शाम को अभी याद है वह बचपन में अपनी बूवा के घर जाकर अनानास कैसे खाता था। बाग में नहर का पानी आता था। कुएँ भी थे। वह नहर के पानी से खेलता था और चिक्कू और पपीता तोड़कर खाता था।

शाम और उसके दूसरे भाई बार बार अपनी बूवा के घर जाते थे। खास करके चैत्र वैशाख में, जब आम और कटहल पकते हैं। हर साल इन दिनों में शाम अपनी बूवा के घर रहता था। बड़ा आनन्द था शाम को।

सुबह सुबह रहट चलता है। बैल गोल गोल घूमते हैं। नौकर बाग में पानी देता है। एक तरफ पानी बाग में जाता है दूसरी तरफ स्त्रियाँ पानी भरती हैं, कपड़े धोती हैं। सुबह सुबह रहट का वह "कुवूँ कुवूँ !" आवाज अभी शाम के कानों में गूंजती है। इस प्रकार बाग में पानी देने को कोंकण में सींचना कहते हैं। अपनी बूवा के बाग में शाम को

बड़ा आनन्द आता था। वहाँ कभी कभी लंगूर आते हैं। कोंकण के लंगूर बड़े धीरज के होते हैं। एक बार शाम के बड़े भाई ने एक लंगूर को पत्थर मारा। मजा तो देखो। उस लंगूर ने वह झेलकर भाई साहब को मारा। नसीब अच्छा था, बच गया। नहीं लगा। नहीं तो दो सर होते! लंगूरों के साथ उनकी बीवी भी होती है। बच्चे भी होते हैं। बाग में लंगूर कभी कभी कबड्डी से खेलते हैं। देखकर आनन्द आता है।

प्रथम प्रथम बूवा अमीर थीं। मगर धीरे धीरे उसका सुख कृष्ण पक्ष के चन्द्रमा सा घटता गया। संतान नहीं थी। इसलिये बूवा दुःखी थीं। व्रत रखे, उपवास किए, पूजा पाठ किया; मगर उनकी गोदी सूनी रही। उनका घर सूना रहा। इसलिये वह उदास उदास रहती थीं। जैसी वह बूढ़ी होती गईं वह उदासी कम हुई। साथ साथ और मुसीबतें बढ़ती गयीं।

रामचन्द्र पन्त की स्टेट बड़ी थी। मगर आदत तिकड़म् करने की। अक्सर अदालत और फौजदारी चलती थी। बिना अदालत गए चैन नहीं पड़ता था। कोंकण के लोग यों ही झगड़ालू होते हैं। गांजा अफू का व्यसन होता है न? वैसे ही उनको कोर्ट दलाली का व्यसन। अदालत वकीलों के घर जायेंगे। अँगुल भर जमीन के लिये तीन कोर्ट लड़ेंगे।

रामचन्द्र पन्त के रिश्तेदार भी खूब थे। बखेड़ा भी ज्यादह। इस बखेड़े से कर्जा भी खूब हुआ। बाग की मशागत? ठीक नहीं हुई। पैदाईश घटने लगी। खर्चा, साथ साथ कर्जा भी बढ़ता गया। कुछ तो रिश्तेदारों का ही कर्जा लिया था। उन्होंने मुकदमा किया। रामचन्द्र पन्त के बाग का नीलाम हुआ। धीरे धीरे खेती गई, बाग गये। अब महज रहने का मकान रहा। अमीरी के साथ मान भी गया। मगर मुकद्दमें बाजी नहीं गई।

बूआ अब गरीब थीं। उनके घर में दारिद्र्य राज था। हाथ में

महज कांच की चूड़ियाँ रह गईं थीं। बदन पर महज मंगल सूत्र का मंगल मणि रहा। गहने महाजन के घर जा बैठे। कान के सुराख ही रहे। नौकर चाकर नहीं रहे। सब सुख के साथी होते हैं। दुःख का साथी है आँसू! जिस देवर को प्रेम से खिला पिलाकर उसने सिखाया था वह उससे बातें भी नहीं करता सीधे मुँह। वह बरार में वकील था। फावड़े से पैसे इकट्ठे कर रहा था। मगर पांच रुपये भी नहीं भेजता था। भाई और भाभी का नाम न लेने की कसम खाई थी उसने! दुनिया में कृतज्ञता नहीं कृतघ्नता ही है। यही चलती दुनिया की चाल है।

यह रही बूवा के देवर की बात। अब मायके की क्या? उसके चार भाई। चारों अलग हुए। चूल्हे के साथ दिल भी टूटे। अदालत बाजी शुरू हुई। कलह से कलेश पैदा हुआ। कलेश से नाश तय है। दोनों ओर दारिद्रय का राज था। उसे कहीं आधार नहीं था!

महज घर रहा था बूवा का। मगर रामचन्द्र पंत की आदत नहीं छूटती थी। हर एक आदमी अपनी अपनी आदत से लाचार है। कर्ज बढ़ता ही गया। आखिर घर भी गया। महाजन की दया से वही बरामदे पर रूखी सूखी बनाकर खाने को और ठंडी-गरमी से बचने को जगह मिल गई। रामचन्द्र पन्त और बूवा दोनों वहीं रहते थे अब।

कमर पर गागर रख कूएं से पानी भर लाती थी अब सीता बूवा। आंगन बुहारती थी। लीपती पोतती और कपड़े धोना बर्तन साफ करना वगैरह सब कुछ करती थी। बचपन से आराम से खाने की आदत थी श्रमना नहीं सीखा था। बूढ़ापे में श्रमना दमना नसीब आया। अब सब सीखना पड़ा था उसे। मुसीबत महान गुरु है। वह सब कुछ सिखाती है मनुष्य को।

क्या आप उस गरीब की झोपड़ी में आना चाहेंगे मेरे साथ? पधारिये। जरा देखें बूवा जी का गरीब संसार! वहीं रसोई पकाती हैं बूवा जी। उनके बदन पर अब गहने नहीं हैं। रसोई घर में उनके

रसोई के बर्तन भी पूरे नहीं हैं। वह देखो एक मटका है। उसी में दाल पकी है। देखी आपने वह छोटी सी पीतल की पतेली? उसमें भात बनता है। और रही वह कड़छी। बस; उस जमाने के वह कंडाल पीपे डब्बे, थालियाँ, हंडे, सब कुछ गायब हैं। कहाँ गये सब? वकीलों के पेट में। महाजनों के घर। मुकद्दमे बाजी की न आदत पड़ी थी? अंगुल भर जगह के लिये न तीनों अदालत झूलते? अदालत में जीते, जीवन में हारे। अदालत की कृपा है?

क्या? क्या कहा आपने? अदालत से बचा!! क्या सचमुच कोई अदालत से बचा है? यह सब कहने की बातें हैं जनाब? वहाँ तो मेला लगता है। अगर इस तरह आँख और कान खोलकर जीवन पथ पर पग बढ़ाएँगे तो गुलाम कौन कहेगा हमें?

खैर, हमारी बेचारी गरीब बूवा को तो देखो। वह बेचारी दिन भर खांसती खूंसती है। श्वास रोग है। ठंडी-गर्मी में काम कर आज़मा हुआ है। क्या करेगी बेचारी। बर्सात हो या ठंडी, बाहर बरामदे पर सोना पड़ता है। पहाड़ की हवा। दिन रात सूं सूं करती बहती रहती है और दिन रात बूवा खूँ खूं कर खांसती रहती है! ओढ़ने को भी कुछ है? एक चद्दर है छोटी सी। कई जगह फटी हुई। एक उससे क्या सर्दी निभेगी? मज़बूरी है और क्या? हिंदुस्तान में करोड़ों लोग ऐसे ही मज़बूर हैं। सोचकर दिल बैठ जाता है। इन सबों का उनके तन पर और मन पर परिणाम हुआ है। श्वास रोग से बदन टूट गया है। सर्दी के दिनों में तो बेहद बेचैनी होती है। एक बार खांसी आई बस घंटों बीतते हैं खूँ खूँ कर! अच्छा! इलाज किसका कर रहे हैं? बाबा! बिना दाम के काम कैसे होगा? दवाई भी दाम मांगती है? वह कहां से आयेगी? और आदमी अपनी आदत से लाचार है। कहीं से चार पैसे आये तो अदालत के स्टँप को न जायेंगे? कहीं से आठ आने श्रीमान् पन्त जी के हाथ लगे बस कोई अर्ज ड्राफट किया गया। किसी वकील के क्लर्क ने पान चबाने की अपनी तजबीज कर ली! हमारे

पन्त जी समझते हैं पहला अर्ज किया था तब शनि पंचम में, गुरु द्वादश में था, अब ग्रह बदले हैं। परिणाम भी बदलेगा।

इतना सब होने पर भी सीता बूवा अपने पति से नाराज नहीं हुई। न उनसे झगड़ी न बिगड़ी। कभी कुछ भला बुरा नहीं किया। वह रोज आधपाव दूध लेतीं। सुबह चाय बना देती अपने पति को। वह भी आज़मा होनेपर चाय पीने लगी थीं। उसने कभी अपने पति को दोष नहीं दिया। इतना ही नहीं, एक बार उसके भाई रामकृष्ण पन्त आये थे उससे मिलने। उन्होंने कहा "अभी इनको अकल कैसे नहीं आती? इन अदालतों के नाद से सभी स्वतम हुआ। बरबाद हुआ सब। मैंने तुझे भाई दूज के दो रुपये भेजे थे। वह भी वकील को दे बैठे। तुझे बताया भी नहीं। यह कहाँ की शराफत है? मन में आता है·········

"मत बोल ऐसी बातें!" उसने भाई के मुँह पर हाथ रखा। पति निंदा सुन नहीं सकी वह सती। पति को बोलने का अधिक से अधिक हक था उसका। मगर वह भूलकर भी कभी नहीं बोली। 'भैय्या! मनुष्य क्या कभी बुरा सोचकर काम करता है? भलाई की इच्छा से ही न करता है? वे अदालत में जाते हैं गया हुआ धन लाने के लिए। बुरे दिन आये। क्या करें? खैर; हम स्त्रियों की बात कुछ ठीक है। वह घर में ही बैठती हैं। बाहर जाने की नौबत नहीं आती। पुरुषों को बाहर घूमना पड़ता है, कोई कुछ कहता है तो कोई कुछ। सब बरदाश्त करना पड़ता है। बेइज्जती सहनी पड़ती है। यों देखा जाय तो हमारा कौन है? किसके लिये धन और किसके लिये संपत्ति? मगर सर ऊँचा कर रहने को चाहते हैं। गई हुई शान शोभा वापिस लाने को तड़फते हैं। अपील करते हैं, अर्ज करते हैं। अगर उनके प्रयत्न का फल आता तो तुम कहते होशियार हैं, दक्ष हैं, वगैरह। मगर बेचारे नाकामयाब हुए; इसलिए क्या हम उनका नाम रखेंगे? भैय्या जो कुछ होता है चुपचाप देखना और सहना चाहिये। जले पर नमक

मलने से क्या फायदा ?"

वह अपना बोलना पूरा नहीं कर पाई बस खांसी आने लगी। कैसी खाँसी है यह ? आंखें सफेद हुईं। रोकने पर भी नहीं रुकती। रामकृष्ण पन्त को बहुत बुरा लगा। उसकी आंखों में आंसू आए। "जीजी !" उसने खांसी रुकने पर कहा; मां बाप के मरने से क्या मायका मर जाता है ? हम हैं न तेरे भाई ? कम से कम मैं हूँ। मेरी घर वाली अच्छी है। गरीब होने पर भी वह सुख है मुझे। चल मेरे साथ। पैसे भेज देना मुश्किल होता है मुझे। मगर घर में मेरे साथ रूखी सूखी तो खा सकेगी ? चल मेरे यहां रह महीना भर !"

"हां ! आऊंगी मैं तेरे यहाँ !" बूवा ने कहा आखिर तुम मेरे भाई हो न ? मगर भैय्या घर में वे अकेले हैं न ? गरीबी की वजह से नहीं आएंगे वे कहीं। आन भी तो कोई बात है ? ऐसे बड़े स्वाभिमानी हैं। घर में हैं हम दो प्राणी। वे मेरे हैं मैं उनकी। सच पूछो तो आजकल घर का सभी काम वही करते हैं। मुझ से काम होता ही नहीं। क्या करूँ मैं। उनको घर का सभी काम करते देख आंसू आते हैं। मगर वह आंसू पोंछनेवाला भी कौन है ? अरे यह क्या तू भी रोने लगा ! पागल ! पोंछ लो वह आंसू ! बस; आते रहना कभी कभी। इतना ही काफी है। आज वह भी कौन करता है ? भैय्या ! बुरा मत मान मैं नहीं आ सकती तेरे घर। मैं तो अस्तमा से बीमार। तेरे घर में कहीं बलगम पड़ा कहीं कफ। रोज क्या तेरी घर वाली को अच्छा लगेगा वह ? अगर किसी की सेवा कर सकते हैं तो उनके घर जाना चाहिये। यहां तो सब दूसरों को करना पड़ता है। मेरी धोती भी वह खुद धो लाते हैं अपनी धोती के साथ। "कभी कभी अपनी बहन के पास आते जाते रह...!" बस फिर वही खांसी, वही तड़फना, वही घबराहट !

× × ×

बूवा के बाल बच्चे नहीं थे। रहने का घर भी नहीं था। मगर एक नया संसार सज रहा था उनका। उसके एक दूसरे भाई ने एक

गाय दी थी। दूध कैसे खरीद सकेगी वह ? और उतना ही आधार। गाय थी बड़ी सुन्दर, काली, गोया काली कपिला। एक सफेद चांद था उसके माथे पर। आसमान का चाँद। उस गाय का नाम था जमुना। जमुना की मां अच्छी दुधारु गाय थी। जमुना भी वैसी ही थी। कभी किसी को मारती नहीं थी वह। हाँ ! नये आदमी को देखते ही कुछ सकुचाती थी, डरती थी कुछ, सहमती थी। मगर प्रेम से हाथ रखो पीठ पर, थोड़ा सा खुजलावो, हिल जाती थी, चाटने लगती थी। कभी कोई शिकायत नहीं थी उसकी। कोई आया, बस दूध दिया !

वह गाय और उसके बछड़े अब शाम की बुवा की संपत्ति थीं, संसार था, सर्वस्व था। उस जमुना गाय का नया बछड़ा हुआ बस शाम की बुवा खुशी खुशी आसमान छूने लगती। उस छोटे से बरामदे में बछड़ा बांधा जाता था। उन बछड़ों को पुचकारना, उनको नहलाना, उससे तुतलाकर बातें करना और उनको खुजलाना। इसी में बुवा का सारा आनंद, सारा सौंदर्य और सारा जीवन। इसी में सर्व सुख था उसका।

सर्दी के दिन आते बस, वह कहीं से पुराने बोरे लाकर उनके झूल बनाती उन बछड़ों के लिये। बीमारी कमजोरी की वजह से चला नहीं जाता उससे, फिर भी वह इर्द-गिर्द की हरी घास लाती। उनको उन बछड़ों के मुँह के सामने रखकर खिलाने लगती। बाहर गये हुए बछड़े अगर समय पर घर न आते तो बूवा का दिल धड़कने लगता। वह आंगन में जाकर उनको बुलाने लगती "मोरवा आ। आ मेरे राजा ! चांदनी ! तू भी नहीं आई आज ?" वह घर आये बस उसकी जान आई।

उसके बाद वह चिराग जला कर गीत गाती उनके पास बैठकर।

चिराग चिराग सुख देने हार !
गले में पड़ा है मोती हार।
देखकर करूं मैं नमस्कार।
तिल का तेल कपास की बात।
दिया जलत है नित मध रात।

दिया जले भगवान के पास।
गोया मेरे दिल की आस!"

वगैहर गातीं। चूल्हे की थोड़ी सी भभूति लाकर भगवान का नाम लेकर उनके माथे में लगाती थी।

× × ×

मनुष्य का हृदय स्वभावतः प्रेम पूर्ण होता है। ईश्वर की कृपा है उसने प्राणिमात्र के हृदय में प्रेम का संचय कर रखा है। प्रत्येक प्राणी अपना प्रेम किसी न किसी को देना चाहता है। गाय का थन दूध से भरा हो तो उसे खाली करने के लिए बछड़े की आवश्यकता होती है। अगर बछड़ा नहीं तो गाय का दूध स्रवता है। उसे खाली करने के लिये वह रंभाती है। गोया वह संचित प्रेम की वेदनायें उसे असह्य होती हैं।

हम सब इसी प्रकार रंभाते रहते हैं। अपने पास आनेवाले को गोया सूँघकर देखते हैं हम। "यही तो हमारे हृदय के प्रेमामृत पीने वाला बछड़ा तो नहीं?" तब तक, जब तक इस प्रकार प्रेमप्राशन करनेवाला बछड़ा नहीं मिलता, हम बेचैन होते हैं। विधवा भगवान को अपना प्रेम पात्र मानकर उसकी पूजा करती है, सेवा अर्चा करती है, उस लंगड़े बाल कृष्ण को मक्खन-मिश्री खिलाती हैं। अपना वात्सल्य प्रेम व्यक्त करती हैं।

स्त्री हो या पुरुष अपने प्रेम देने के लिये अपत्य की आवश्यकता होती है! और वह है मानसिक निर्मल प्रेम की तुष्टि के लिये। किस को गोद में लूँ। किस को पुचकारूँ? किससे तुतलाती बातें करूँ? ऐसा हो जाता है प्रत्येक स्त्री पुरुष को। दुनिया में मां-बाप होने में एक प्रकार की धन्यता महसूस होती है। मां-बाप अपनी संतान को प्रेम देते हैं। मगर जिनको बाल बच्चे नहीं वह दूसरों के बाल बच्चे पास करते हैं, उनको अपना प्रेम देते हैं, खाना देते हैं, खिलौना देते हैं, उनसे हंसते हैं, बोलते हैं, हृदय को शान्त करते हैं।

शाम की बूवा के कोई बाल बच्चे नहीं थे। मगर उसका पूरा अपत्य प्रेम उन बछड़ों पर था। वही उसका संसार था, सर्वस्व था। अब जीवन में नीरसता नहीं थी। 'अगर मैं मर जाऊँ तो इन बछड़ों का कौन करेगा ? इनको पानी कौन देगा ? हरा हरा घास कौन खिला एगा ?' वगैरह बातें आती थीं उसके मनमें। "यह सब मुझे करना है अब !" कहती थी वह।

कितने ही सालों के बाद शाम आया था उससे मिलने। वह छोटे से बरामदे में रहती थी। शाम यह नहीं जानता था कि उसकी बूवा का मकान भी गया है। उसने पूछा, "बूवा ! इस बरामदे में क्यों रहती है ?" "क्या कहूँ मैं बेटा तुझे ?" उसने कहा "दुर्दैव है हमारा। भगवान की कृपा है यह बरामदा मिला। नहीं तो मंदिर में जा रहने की नौबत आई थी। सब गया हमारा। हाँ भगवान ने दिया बस, उसने लिया भी। यह सब अब क्यों पूछता है तू ? जाने दो उसे ! अच्छा ! कब आया बेटा ! बैठ ठीक बैठ ! एक बार देखने दे मुझे। अरे ! तू मोटा ताजा क्यों नहीं बना ? वैसा ही कंकाल सा है जैसा बचपन में था। शाम ! कितने साल के बाद आया तू ? तब तक तेरी खबर मिलती थी जब तक तेरा बाप था और वह यहाँ आया करता था। मगर गये वह ! इस समय रहना चाहिये था उन्हें। अब कुछ अच्छे दिन देख सकते थे वे। तेरा बाप कहता था सीता ! मेरा शाम न ! अपना नाम कर जाएगा। आज अगर वह होते तो कितना खुश होते। मगर भगवान किसी का भला नहीं देख सकता। वह मुझ जैसों को खूब आयुष्य देता है मगर उनको ले जाता है जिनको रहना चाहिये था। इस गाँव के लोग पढ़ते हैं अखबार में तेरी बातें ! यह सुनकर आते हैं और कहते हैं "शाम अच्छा निकला !" "सुनकर खुशी होती है !"

अपनी बूवा के शब्दों से शाम का हृदय-सागर डोलने लगा। उसको अपना बचपन याद आया। माता पिता की कृश मूर्तियाँ आँखों के सामने आईं। "मैं बड़ा होकर तुझे सदा सुखी रखूंगा !" वह अपनी

माँ से कहता था। वह सब याद आया। भगवन्! मेरी माँ कहाँ है? कहाँ है मेरे पिता जी? तूने ऐसा क्यों किया? हमारे कुलश हृदय की पवित्र और प्रेम पूर्ण आशा को कुचलते समय क्या तुझे आनंद होता है?" उनके विचार और भावनाओं से शाम का दिल भर आया। आँसू आये उसकी आँखों में। मगर वह उसने छिपाये।

बूवा के बरामदे में शाम बैठा हुआ था। वहीं दो बछड़े थे छोटे-छोटे। बूवा ने शाम को गिलास भर दूध दिया। "ले यह दूध!" उसने कहा "संकोच मतकर। आज कल घर में काफ़ी दूध रहता है। खाने वाला ही नहीं! अरे! वह मलाई क्यों निकालने लगा! वह भी खा। बचपन में कितनी भाती थी तुझे मलाई। कितना जिद करता था तू मलाई के लिये? याद आती है? जमुना गाय खूब दूध देती है। उसी के बछड़े हैं ये। हीरा? पहचाना तूने यह कौन है? अरे। तेरी माँ इसी के घर की तो है। मगर तू क्या जाने वह बातें। अरे ऐसा क्यों देखता है पागल सा? सीधा देख। काने की तरह क्या देखता है? शाम तुझे कुत्ता कहेगा। मुझे अच्छा नहीं लगता तुझे किसी का कुछ कहना। ऐसा क्यों देखता है? क्या चाहिये तुझे? अच्छा! आंगन गस्ती करना चाहता है। समझ गई मैं। शाम! इसे जरा आंगन में घुमाकर ला। क्या तू घुमा सकेगा इसे! पकड़ इसे नहीं तो खूब शैतानी करता है। कूयें में जायेगा!

बूवा के घर वह बछड़े अँधियारी में चमकने वाले चाँद थे, उसके दुःखी संसार का सुख था। वह वत्स प्रेम! शाम ने उस बछड़े को पकड़ा। वह नाचने लगा। हिरण-सा नाचता था। बूवा उसका कौतुक करती थी। "कैसा कूदता है?" तारीफ करती थी। "इतना सा जाव है। कितना चालाक? कितना फुर्तीला? शाम! तेरे काबू में भी नहीं आता है न?" हीरा के नृत्य के साथ बूवा का वत्सस्तोत्र भी जारी था।

शाम ने हीरा को बांधा और अपनी बूवा के पास आ बैठ गया।

उसकी धोती में कुछ लगा था बूवा के हीरा ने उसकी धोती मैली क थी। वह देखा बूवा ने। "अरे!" बूवा बोलने लगी। "तेरी धोती गंदी की उसने। पागल है मेरा हीरा!" छोटे बच्चे क्या नहीं हमारी धोती गंदी करते?" बचपन में श्रावणी के रोज हम गोबर लगाते थे बदन में। खाते भी थे पंच गव्य में। और हीरा……!"

सुनकर बूवा की आँखें मोती बरसाने लगीं। क्यों भला? शायद कोई दुःखद स्मृति जागृत हुई। उसके होंठ भी फड़कने लगे। हृदय की भावनाएं मूक होना चाहती हैं। मगर वह दबा रही है। आखिर वह कामयाब नहीं हो सकी। "शाम!" उसने कहा "भगवान् भी क्या दूसरों का भाग्य देख सकता है? आज तू यहाँ पाँच छः बछड़े देख सकता अगर सब होते। सभी जमुना के ही! पहला गोरवा कितना अच्छा था? जवान होने आया था, गोया धोड़ा। मगर किसी की आँख लगी, मर गया। किस रोज मरा था वह?" वह उसकी मृत्यु तिथि स्मरण करने लगी। इतने में रामचन्द्र पन्त आए। बूवा उनसे पूछने लगी "याद है आपको गोरवा किस रोज स्वर्ग गया?" गत साल का वैशाख...और तिथी...त्रयोदशी...मंगलवार था उस रोज! भगवान ने उसी को चुना। कैसा था वह? इतने में वह खुश नहीं हुआ। इसके बाद कोई साथ आई और दो बछड़े भगवान के घर गये। जमुना भी मरकर जीती है। कितनी सेवा करते थे हम? अब वह हीरा बचा है। शाम! भगवान ऐसा क्यों दुष्ट बना है? तू अब बड़ा हुआ है, लिख पढ़कर पंडित बना है। कह; तू ही कह भगवान ऐसी दुष्टता क्यों करता है!!

"बूवा जी!" शाम ने कहा "वह जो कुछ करता है हित के लिये करता है। हम उसके उद्देश्य को नहीं जान सकते। हमें श्रद्धा रखनी चाहिये, भक्ति करनी चाहिये!"

"क्या हित और क्या भलाई?" बूवा ने कहा "हमारे बाल बच्चे क्या हैं? यही गाय के बछड़े हैं हमारा सुख। अगर उसे ले जाना होता तो एकाध ले जाता। सभी क्यों ले गया? हीरा तू शतायुषी हो! देखा

कैसा गला आगे लाता है ? सभी समझता है वह। क्या चाहता है रे ? अरे ! ऐसा क्या देखता है ? देख शाम तुझे काना कहेगा।"

बूवा उस बछड़े की बात कहती थी जैसे कोई माँ अपने बच्चे की बात कहती है। वह कहती थी "वह बच्चा स्वर्ग गया !" गोया उसी का बच्चा स्वर्ग गया। उसके स्वर्गवास की तिथि वार सब उसके मन में था, स्मरण में था। दिल में कणक की तरह छिपाये रखा था। यह सब सुनकर शाम के दिल पर क्या असर हुआ होगा ?

"बूवा जी मैं जाता हूँ अब !" शाम ने अपनी बूवा के पैर पर अपना मस्तक रखकर कहा "देर हुई !" बूवा ने आशीर्वाद दिया "शतायुषी हो।" शाम ने पांच रुपये अपनी बूवा के हाथ में रखकर कहा। "तुम्हारा शाम अमीर नहीं है ! उसके पास पैसे नहीं रहते। क्या दूँ मैं ? यह पाँच रुपये लो !"

उसकी आँखों में आँसू आये। पैसे क्या चाटने के हैं ? वह आज है कल नहीं ! मगर मीठे शब्द ! वही रहते हैं दिल में घर कर। मीठे शब्द और प्रेम पूर्ण व्यवहार की खामी नहीं होनी चाहिये। मगर उसी का दारिद्र्य है दुनिया में। अच्छा आते रहना। यह न सोचना कि कोंकण में मेरा कोई नहीं। हाँ तेरे मा बाप नहीं हैं। मगर हम हैं न ? क्या कहता है ब्याह करोगे नहीं। अगर तेरे माँ बाप होते तो क्या तुझे ऐसे रहने देते ? दुनिया में कौन है तेरी फिक्र करने वाला ? कौन है तेरी सेवा करनेवाला ? पत्नी होती है अपने प्रेम की। हम वट सावित्री के गाने में कहती हैं।

'स्त्री है यश की शक्ति
करती है पति की भक्ति'

साधु संतों ने क्या ब्याह नहीं किया ? ब्याह करना अच्छा होता है। मगर वह तुझे ठीक नहीं लगता। लिख पढ़कर भी क्या बैरागी बनेगा ? अगर बैरागी ही बनना था तो सीखा क्यों ? मेरा सुनकर खफ़ा मत हो बाबा ! हम अपने पुराने ढंग की औरतें। हमें लगता है; घर

हो, संसार करें, बाल बच्चे हों और अपने अड़ोस पड़ोस की सेवा सहायता भी करें। मगर तुम्हें वह तुम्हारे गाँधी क्या कहते हैं कौन जाने ! मगर उस गांधी महात्मा के भी कहते हैं चार बाल बच्चे हैं। जाने दे सब। जहाँ कहीं भी रह ठीक रह, सेहत ठीक रख। सुना न सब ? हाँ कभी कभी चिट्ठी लिखते रहना। अपनी गरीब बूवा को भूलना नहीं। अरे उतना ही समाधान। ठीक है न ? पत्र लिखेगा न ? अच्छा जा अब। जाते ही पत्र लिखना ! भूलना मत भला !

शाम ने गद्‌गद होकर, "कहा लिखूँगा पत्र ! मैं कैसे भूलूँगा अपनी बूवा को ? नमस्ते !"

"अरे जरा ठहर ! यह सुपारी ले जा चार।" ऐसा कहकर चार गीली सुपारियाँ शामके हाथ में दीं। आज देने को उसके पास था ही क्या ? एक जमाना था, उसके आँगन में सुपारियों का ढेर पड़ता था। मगर आज चार सुपारियां भी मुश्किल से मिलती थीं। बाग वैसा ही था जैसा पहला था, मगर वह आज दूसरे का था। कूँवा था उस पर रहट भी कूँऊँ कूँऊँ कर चलता था। मगर उस पर शाम की बूवा की सत्ता नहीं थी। शाम को अपने बचपन में सीता बूवा के घर का देखा हुआ वैभव याद आया। आँखें गीली हुईं। वह गदगद हुआ ! मगर क्या करता। "नमस्ते" कहकर भारी पैर और भरी आँखों से लौट पड़ा।

× × ×

शाम की बूवा घर में बछड़ों के संगत में सुख का संचार करती है। शाम अपने व्यवसाय में मशगूल रहता है। मगर कभी कभी उसको अपने बाल्यकाल का स्मरण हो आता है। खास कर जब कभी वह नहा कर भगवान के स्मरण करने बैठता है वह स्मरण ताजा हो आता है और उसकी संध्या होती है आँसुओं से।

× × ×

शशि....

"शशी !" हरदयाल ने कड़क कर कहा "वहाँ पेड़ के नीचे बैठ कर क्या करता है ? सब स्कूल गये । तू वहीं बैठा रहेगा ?"

"बाबू जी !" शशि ने लाडले प्रेम में कहा "मैं परिंदों का चहकना सुनता हूँ । कितना मीठा बोलती है यह कोयल ? मुझे इन परिन्दों का चहकना और फुदकना बड़ा अच्छा लगता है । बाबू जी ! लखू भैया बाजा बजाता है न ? मुझे उस भकास बाजे से इन पंछियों का गाना अच्छा लगता है । आज मैं नहीं जाऊँगा उस स्कूल में । मदरसे में जी उकता जाता है गोया दम घुटता है । सीखने के लिये स्कूल में जाना क्या ज़रूरी है ? इन पंछियों को क्यों कोई मदरसे नहीं भेजते ? और उन भौरों को वह सुन्दर नाच कौन सिखाता है ? इन कोयलों को यह मीठा गाना सिखाने वाला कौन है ? बाबू जी ! मुझे नहीं चाहिये वह मदरसा । मैं नहीं जाऊँगा वहाँ । मुझे नहीं भाता है वह !"

"गधा कहीं का !" हरदयाल ने पितृत्व के अधिकार में कहा "क्या तुझे पत्थर बन कर जीना है ? मुझे नहीं भाता वह स्कूल ! आदमी की औलाद है । पढ़ोगे नहीं तो क्या ? वह कैसा मनुष्य जिसे पढ़ना लिखना नहीं आता ? वह तो जानवर है । उठ ! चल !!......" फिर से हरदयाल ने कड़क कर कहा ।

"तो यह परिन्द क्यों बुरे ? और वह चींटिया ? देखिये वह कितनी सुन्दर कतार लगा कर चलती हैं । आने वाली जाने वाली से मुँह लगाती हैं । गोया विदा करती हैं । दिन भर काम करती हैं । न आराम न आलस । आदमी लिखने पढ़ने से क्या अच्छा होता है ? हमारे स्कूल के मास्टर क्या अच्छे हैं ? वे तो मारते हैं । गालिआँ देते हैं ।

बाबू जी ! अच्छा किसको कहते हैं ? मैं क्या बुरा हूँ ? मैं क्यों अच्छा नहीं ? हमारी गाय का बछड़ा अपनी माँ के पास जाता है। गाय उसको चाटती है। मैं दो रोज प्रथम अपनी माँ के पास गया और माँ से कहा माँ ! तू मुझे चाट जरा ! इसलिये क्या मैं बुरा हूँ ? बछड़ा अपनी माँ को मुँह से ढकेलता है और मैं अपनी माँ को। जब कभी जुकाम होता है तब मेरी नाक में बलगम आता है इसलिये क्या मैं गंदा हूँ ? बाबू जी ! मुझे पेड़ पर चढ़ना आता है। परिन्दों के घोंसले कहाँ होते हैं वह मैं जानता हूँ। मछलियाँ नदी में नाचती हैं वह मैं देखते बैठता हूँ। मैं चिड़ियों की बोली जानता हूँ, तितलियों के साथ खेलता हूँ। कितने रंग की तितलियाँ रहती हैं आप जानते हैं ? मैं जानता हूँ। बताऊँ ? बताऊँ बाबू जी !......" शशि साभिमान बातें कर रहा था।

मुझे तुझसे बोलने की फुरसत नहीं। अवारा कहीं का। बदमाश ! चल स्कूल में, हाँ उठ। ले बस्ता। निकल यहाँ से।......अरी सुना तुमने ?......अगर आज स्कूल नहीं गया यह, रात को घर में मत आने दो। अरे गधा ! देखता क्या है। उठाव बस्ता। पेन्सिल नहीं ? रोज पेन्सिल कहाँ से आएगी। कल ही तो पेंसिल दी थी। अच्छा ! अभी तेरी मरम्मत करता हूँ......वह फूल से कोमल गाल लाल होने लगे।...फिर कभी पेंसिल गायब करेगा ? क्या मारो मत ?...मारो मत !.. मारूँगा नहीं तो क्या फूल चढ़ाऊँगा ? दया ?......शैतान कहीं का...दया किस बात की......!!!

उस बालक की आँखें पवित्र निष्कलंक अश्रु गिराने लगीं। शशि, सुन्दर कोमल शशि। उसके गाल गोया गुलाब के फूल। कभी-कभी तितलियाँ भी धोखा खाकर उसके गाल पर आ बैठतीं। शशि अपनी आँखें मूँद लेता प्रेम से। वही गाल उसी के पिता जी ने मार-मार कर मसल डाले। आँसुओं से भिगोये।

"बाबू जी ! मैंने पेंसील नहीं गँवाई !" शशि ने बिलखते हुये कहा सचमुच मैंने नहीं खोई। मेरा दोस्त अमीन ! सभी उससे नफ़रत करते

हैं। मुसलमान ही तो है! मुसंडया! मुसंडया!! कहते हैं उसे। कल उसके पास पेंसिल नहीं थी। उसको दूसरा कोई नहीं देता था। मैंने दी। दूसरा एक छोटा सा टुकड़ा था वह खोया! कल की पेंसिल है अमीन के पास।"

"तो ले आ उससे वह पेंसिल! कहता है पेंसिल अमीन को दी। बड़ा अमीर का बेटा है न? आज पेंसिल दी कल कोट उतार देगा। कुबेर भी भिखारी बन जायेगा ऐसा। बिलकुल अक्ल नहीं। बेवकूफ़। मदरसे से आते समय पेंसिल ले आ। नहीं तो देख कमर सीधी कर दूँगा!" बाप ने कहा।

"दी हुई चीज कैसे लूँ मैं वापिस?" बेटा बोला "दिया दान लिया दान, अगले जनम मुसलमान!" मैं मुसलमान न बनूँगा अगले जनम? और तुम्हें तो मुसलमान बिलकुल नहीं भाते!......शशि ने अपनी समस्या उपस्थित की।

"पाजी कहीं का! वह सब मैं नहीं जानता। शाम को आते समय तुम्हारे पास पेन्सिल होनी चाहिये। अगर नहीं रही तो देख। और अमीन से दोस्ती मत कर! कितनी बार कहा तुझे। देख फिर कभी बोलेगा उससे। चल बस्ता उठा अपना।" हरदयाल ने उसका हाथ पकड़ कर खींचा।

शशि ने अपना बस्ता उठाया। हरदयाल ने उसकी गर्दन पकड़ कर अर्ध चन्द्र दिया। आंगन के बाहर किया। अब वह स्कूल जायेगा। अच्छा? हरदयाल अपने घर लौटे।

गरीब बेचारा शशि? रोते रोते स्कूल गया। तीसरी जमात में था वह। मदरसा कबका लग चुका था। शशि धीरे धीरे वर्ग में गया। उस्ताद ने देखा। एक बार आँखें निकाल कर देखा उसकी तरफ, गोया भेड़िये ने बकरी की तरफ देखा। शशि चुपचाप अपनी जगह पर जा बैठा।

"क्यों?" मास्टर साहब गरज पड़े। चुपचाप जा बैठे अपनी जगह

पर गोया शरीफ है। जरा आ यहाँ......मैं कहता हूँ यहाँ आ ऽऽ।...
नहीं सुनता ? अबे ! शरीफ की औलाद यहाँ आ ! पकड़ कर ला उसे
मैं कहता हूँ यहाँ आ जनाब जा बैठे अपनी जगह ?

शशि का कान पकड़ कर ले गये कुछ लड़के। मौत के पास उसके सिपाही भी होते हैं। हाँ उस्ताद का पेट जरा जरूरत से बड़ा था। कुरसी और टेबिल का अंतर पूरा करता था वह। टेबिल जब आगे खिसकाया जाता तभी मास्टर साहब उठ सकते थे। इस लिये यह रिवाज सा हो गया था कि मास्टर साहब जिस बालक पर खफा होते उसी का कान पकड़ कर मास्टर साहब के सामने पेश किया जाता गोया देवी के सामने बकरा पेश किया जाता है। विश्रामन्दिर के इस देवता के सामने शशि के से कोमल बच्चों की बलि चढ़ायी जाती थी।

"हाथ आगे धर !" गुरु देवता की आज्ञा हुई। शशि ने अपना लाल लाल कमल सा कोमल हाथ आगे बढाया। बस चप् चप् बेंत पड़े। एक दो तीन चार......

"जा ! अपनी जगह पर, जाकर एक घंटा खड़ा रह !" गुरु देवता ने फर्माया ?

गुलाब पर अंगारे डाले गये। रोता हुआ शशि जा कर खड़ा रहा और बच्चे आँखें मटका कर भवें नचा कर उसको खिजाने लगे।

स्कूल में किताब पढ़ी जा रही थी गिलहरी का सबक था। गिलहरी एक नटखट जानवर है। वह फ़ुदकते हुए चलती है। उसकी दुम अकसर नाचती रहती है। वह अगले दो पैरों से अपना भक्ष्य पकड़ कर खाती है। खाते खेलते वह चक् चक् ऐसी आवाज करती है। उसका बदन मांसल, फुर्तीला,और तेजस्वी होता है......वगैरह लिखा था उस सबक में।

वाचन चल रहा था। मगर शिक्षक कहाँ देख रहे थे ? राहू की नजर चन्द्रमा पर ! शिक्षक शशि की ओर देख रहे थे।

"शशी !" शिक्षक ने पूछा कहाँ देखता है तू ?

"बाहर गिलहरी नाच रही है !" शशि ने कहा "मैं उसका नाचना देखता था पंडित जी !"

अरे ? तेरे किताब में है न गिलहरी का चित्र ! स्कूल में गिलहरी का सबक चल रहा है और यह जनाब बाहर गिलहरी का नाच देख रहे हैं। स्कूल में क्यों आता है भीख मांगने ? बस, दिन भर पंछी देख, गिलहरी देख नहीं तो चीटियों से खेलता रह ! और बेशरम ऐसा कहता है "बाहर देख रहा था मैं ?" गुरु देव का प्रवचन शुरु हुआ।

शशि ने नम्र होकर कहा "मुझे परिन्दे खूब भाते हैं। और बाहर एक गिलहरी दूसरी गिलहरी के पीछे लगी थी। कितनी दौड़ धूप धाँधली थी उनकी ? गोया घुड़दौड़ ! जाऊँ मैं बाहर ?"

"अच्छा बाहर जाता है !" आँख पर का ऐनक ठीक करते कहा गुरुदेव ने "जरा यहाँ आ तो। बेअदब ! बदजात !! मास्टर को क्या समझा तूने ? जरा यहाँ आ !......"

शिक्षक ने नरसिंहावतार धारण किया था अब। यह तो शिक्षक का अपमान था। वह कैसे बर्दाश्त करेगा ?

शशि धीरे-धीरे काँपते पैरों से शिक्षक के सामने खड़ा हुआ। शिक्षक ने उस का सर पकड़ कर पटका एक बार दीवार पर और एक बार टेबुल पर। ऐसा ही चला। आगे-पीछे दोनों ओर से उसका सिर दुरुस्त किया गया।

शशि रोने लगा, बिलखने लगा, और अमीन की आँखें मोती बरसाने लगीं। लखू और गोविन्द हँस रहे थे।

सजा पूरी हुई। शशि अपनी जगह पर आया। गुरु देवता के सामने शशि का श्रीफल—नारियल—फूटा ! वाचन आगे चालू हुआ। वाचन में एक शब्द आया। "वनराजी।"

"अच्छा !" शिक्षक रुके "वनराजी का मतलब ?" सभी मौन थे। कोई कुछ नहीं कहता था "गधे हैं सब !" शिक्षक ने अपना रिमार्क दिया। "अरे वन का अर्थ क्या ?" शिक्षक ने पूछा।

"वन ·····राम जिस वन में गया था वह वन !" शशि ने जवाब दिया।

"राम वन में गया था। अरे! तू क्यों नहीं जाता वन में ?" शिक्षक ने विनोद किया।

"मैं भी जाता हूँ !" भोले शशि ने जवाब दिया "मोर होते हैं वहाँ। कितने अच्छे लगते हैं उनके पंख ? छुट्टियों के दिनों में जाता हूँ मैं वन में !"

गुरु देवता शब्दार्थ कहने लगे। वन का अर्थ है "वृक्ष समुदाय" अरे चुन्नी ! लिखो उस तख्ते पर। गधा कहीं का देखता नहीं वह कितना गन्दा है। पहले साफ कर उसको और लिख उस पर वन याने वृक्ष समुदाय। अरे वृक्ष, वक्ष नहीं। और मु ह्रस्व लिख, दीर्घ क्यों लिखता है ?......एक शब्द भी ठीक नहीं लिख सकते। मुँह देख एक एक का। अरे बद्री ! अब बोल राजी क्या है ?

"राजी ?" बद्री ने उठ कर कहा "राजा की बीबी राजी !" बिल-कुल ठीक। होशियार है तू। मारवाड़ी के बच्चे ऐसे होशियार होते हैं। वन राजी का अर्थ है वन की रानी......!! समझे ?

"पर पंडित जी !" एक लड़के ने कहा। वाचन का अन्तर खतम हुआ उस शुद्ध लेखन का अन्तर है !"

"अच्छा लो शुद्ध लेखन ! पाटी लो हाथ में। मुँह घुमावो। अगर नकल करोगे शामत आवेगी। हड्डी नरम करूँगा एक एक की। शशि बैठ नीचे अब। लो पाटी पेन्सिल।" गुरुदेव ने आज्ञा की।

वह उठे अपनी तोंद संभाल कर। शुद्ध लेखन कहते-कहते वह गस्त लगाने लगे। कभी-कभी किसी की पीठ पर बेंत भी बजता था।

शशि के पास पेन्सिल नहीं थी। किससे लिखेगा वह ? उसने एक नरम सा कंकड़ लिया और लगा लिखने !

गुरु देवता ने देखा ! "शशी !" जवाब तलब होने लगा किससे लिख रहा है ? तू पागल तो नहीं हुआ ? अरे पत्थर से क्या लिखते हैं

कोई ? पाटी खराब नहीं होगी ? अरे ! यह तो हमेशा का शुद्ध लेखन होगा !

"तो क्या कभी शुद्ध लेखन लिखने की आवश्यकता नहीं होगी ? यही कायम होगा ?" शशि ने पूछा।

"मूरखराज !" शिक्षक ने कहा "क्या तेरे पास पेन्सिल नहीं है ? स्कूल में क्यों आया ? अब किसी के पास भीख मांग। अरे ! कोई एक पेन्सिल का टुकड़ा दो इस भिखारी को !"

अमीन पेन्सिल ले आया शशि के पास। उसने तोड़ी वह। एक टुकड़ा शशि को दिया। शशि नहीं लेता था। अमीन ने कहा "शशी ! यह तेरी ही पेन्सिल है न ? ले यह !" उसने वह टुकड़ा लिया।

"ले वह टुकड़ा !" गुरु देवता गरज पड़े "भिखारी तो भिखारी और मिजाज बादशाह का।" शुद्ध लेखन शुरू हुआ।

"उस आम के पेड़ में खूब आम लगे थे। आम लगे थे।" "आम क्या हुये ?" बालक पूछने लगे आम……आगे क्या ?

"आम क्या हुये ?" गुरु जी खफ़ा होकर बोले "आम क्या होते हैं ? अरे ! आम लगे थे !!"

एक बालक लिखने लगा "अरे ! आम……"

"अबे ! अरे क्या लिखता है ?" ठीक लिख "आम लगे थे, आम लगे थे।"

"आम लगे थे दो बार क्या लिखना चाहिये ?" मैंने महज एक ही बार लिखा है। शशि ने मीठी आवाज में कहा।

"तेरा माथा ! शैतान है सारे !" "जा नहीं कहूँगा।" गुरू जी आगे कहने लगे अपनी तोंद पर हाथ फेरते हुए।

"उस आम में से कुछ लाल कुछ पीले कुछ हरे थे। उद्गार चिन्ह।" मास्टर साहब की पंजाब मेल शुरू हुई।

जरा धीरे कहियेगा ! "कुछ लाल" आगे क्या ? एक किशोर ने पूछा।

"आगे लाल रे !" दूसरे ने कहा

"जी जनाब ! लाल के आगे लाल जरा ठहर तेरे गाल लाल करता हूँ अब !" अपने वरद हस्त से उस बालक का मुख कमल लाल किया गुरु देव ने ?

भगवान विष्णु ने अपना शंख लगाया था ध्रुव बालक को। उस शंख स्पर्श से वह वेद कहने लगा था मगर गुरु देव के कर स्पर्श से हमारे बालक रोना वेद गाने लगते हैं।

"उद्‌गार चिन्ह कैसे ?" "वह किसने सिखाया है ?" किसी ने पूछा। "गया होगा कहीं झख मारने जब उद्‌गार चिन्ह सिखाया था !" "गैरहाजिर रहता है न ?"

"उद्‌गार चिन्ह बेंत के नीचे बिंदी ! समझे साहब !" बेंत पड़ा पीठ पर। आँखों के आँसू पाटी पर गिरने लगे और लिखा हुआ शुद्ध लेखन उस अश्रु सागर में डूब गया।

"आँख पोंछ पहले। पोंछ वह आंखें। नहीं तो लिखा हुआ सारा मिट जाएगा !" शिक्षक ने शिक्षा दी। लड़का अपनी आंखें पोंछता और दूसरे बेंत के दूसरे नये अश्रु उमड़ आते।

शुद्ध लेखन के अंतर में विद्यार्थी मार खाकर और शिक्षक मार देकर उकता गये। बस अब हिसाब करो।

"एक आने में सात केले" मास्टर कुर्सी पर बैठकर हिसाब सिखाने लगे।

तो वहीं माली का लड़का बैठा हुआ था बोल उठा आजकल केले बड़े महँगे है जनाब ! मेरी मां आने में एक बेंचती है !"

अरे यहाँ क्या केले खाने के हैं ? बाजार भाव से हमें क्या करना ? यहाँ हिसाब सिखाया जाता है। पाटी पर लिखकर पाटी औंधी डाल दो। हाँ जलदी। "एक आने के सात केले तो पौने दो आने के कितने ?"

एक लड़के ने कहा "एक रुपया की पूछिये या दो आने की, हम

झट जवाब देंगे !"

"फाजील ! पौने दो आने दो आने के लिखो ! फिर बात करेगा तो लात खाएगा !" कुछ देर रुककर बोले जनाब ! क्या लिखा जवाब ! शशी ! क्या लिखा है तूने ?

"दो आने के आते हैं मगर पौने दो आने के नहीं आते ! शशि ने कहा "जरा ठहरिये मैं लिखता हूँ कुछ, मारिये नहीं ?"

"मैं लिखता हूं कुछ !" क्या मजा है ? बाजार है यह ? स्कूल है है स्कूल !!"

कुछ रुककर फिर से पूछा "कितने आये ?" किसी ने कहा दस तो किसी ने बारह तो किसी ने ग्यारह !

"सब के सब गलत । एक आने के सात, और सात पौने !"

"सात पौने सवा पाँच !"

"भले शाबास ! सात पौने सवा पाँच और आठ पौने छे !" इतना भी नहीं आता तो दूसरी में जा क्यों नहीं बैठते ? सब के सब गधे हैं साले ! सात और सवा पांच कितने ?

"सवा बारह !"

"अच्छा !" जिनके सवा बारह आये हैं उनका हिसाब ठीक बाकी गलत ।

" मैं जब अपनी अम्मा के साथ आम बेचने जाता हूं !" अमीन ने कहा, अम्मा आधा पाव आम नहीं देती इसलिये मैंने पूरे तेरह लिखे हैं !"

"अरे ! यह तो केले थे और तुने आम लिखे होंगे !" शिक्षक ने कहा "और हिसाब में जितने आते हैं उतने लिखने चाहिये ।" यह सब कब तक सीखोगे तुम ?"

"मास्टर साहब !" किसी ने कहा "गायें घर आयी हमें छोड़ दीजिये अब ?

जरा ठहरो कलका अभ्यास लिख लो ! शुद्ध लेख दस पंक्ति और

हिसाब पांच।

गुरु जी कह रहे थे तो किसी ने कहा "मेरी पाटी पर इतना नहीं लिखा जायेगा नहीं समायेगा इतना।"

"तो बड़ी पाटी क्यों नहीं लेता है बे! स्कूल में भेजते हैं बच्चों को न पाटी न पेन्सिल। यह सब क्या मास्टर खरीद कर देगा? और मास्टर की पगार भी क्या तो बारह रुपये, पन्द्रह रुपये। उसमें से खायें क्या और पहनें क्या? बड़ी पाटी ला या हरफ जरा छोटा लिख! मास्टर साहब ने सुझाया।

"अगर अक्षर छोटा लिखते हैं तो आप से मार न तो खानी पड़ती है। व और ब एकसा कहते हैं आप घ को घ कह कर मारते हैं?"

एक ने पूर्वेतिहास कहकर व्यावहारिक कठिनाई पेश की।

तो बस सात पंक्ति लिखो। और हिसाब भी तीन बस। यह है कल का अभ्यास। लो पाटी बस्ता। खड़े रहो। मुंह घुमावो, चलो कतार में। शिक्षक ने लड़कों को रिहा किया।

+ + +

छुट्टी हुई। बन्दी परिन्द उड़ने लगे।

"अरे वह गाय किसकी है। कितनी अच्छी है, न?"

"वह है गोपू की और दूसरी है भिखूमल की!"

बच्चों में सम्वाद चल रहे थे। बस किसी ने कहा "आज शशि को कैसा खाजा मिला! कंकड़ से शुद्ध लेखन लिख रहा था!"

"हां!" शशि ने कहा "मैं लिखूँगा। तेरा क्या बिगड़ता है। पाटी है मेरी!"

"घर में मेरी ही पीठ की मरम्मत करेंगे बाबू जी!" किसी ने कहा। और लड़के उनका साथ देकर शशि को चिढ़ाने लगे। पिता जी का क्रूर चेहरा उसके सामने आया। छोटी सी पेन्सिल, पाटी खराब, अब भोगे बाबू जी! उसको रोना आया।

"शशी! रो मत!" अमीन ने कहा।

"अमीन !" शशि ने पूछा "मैं आऊँ तेरे घर ? मुझे मारेंगे पिता जी ! तेरे बाबू जी बड़े अच्छे हैं। तुझे नहीं मारते कभी। आऊँ मैं तेरे घर ?" कितनी दयनीय दशा थी उसकी ?

"चल !" अमीन ने कहा "अम्मा खाने को देगी। हम खूब खेलेंगे। चल मेरे साथ।" अमीन शशि का हाथ पकड़ कर घर लाया उसे। उसका बाप दादू धुनिया अब तक घर नहीं आया था।

"अम्मा !" अमीन ने अपनी माँ से कहा "आज मेरा दोस्त आया है। आम दो ! दो दो आम।" उसकी मां ने दोनों को दो दो आम दिये। दोनों चट कर गये और खेलने लगे। दूसरे मुसलमान लड़के भी आये।

"अमीन ! आज दूज है बेटा चांद देख !" अमीन की माँ ने कहा। सभी बच्चे चाँद देखने लगे। 'वह देख चांद ! उस डलिया के पीछे।" शशि ने दिखाया चांद !

कितना खूबसूरत दीखता है। अमीन ने कहा, शशि गाते-गाते नाचने लगा।

आ जा रात के राजा आजा !!
आकर हम पर सुधा बरस कर
प्यारे प्यार तू दे जा !
चमक रहा है चांद गगन में
दमक रहा है नूर जीवन में
उमड़ पड़ा है जोश यौवन में
धधक उठे हैं ज्वाल हृदय में ॥१॥
आरे मेरे जीवन राजा।
जीवन रस मेरा तू पीजा ॥
जीवन मेरा सदा सजा जा।
अपनी चमक जरा सी दे जा ॥२॥
आ जा रात के राजा —

शशि का गाना सबों को भाया। शशि भी उन मुसलमान बच्चों को भाया। हमें सिखाएगा अपना गाना ? तू खेलने को आ रोज। हम तुझे प्यार देंगे। मार नहीं देंगे! अब्बास ने कहा।

"मैं यहीं अमीन के पास रहूँगा अब!" शशि ने कहा।

"वाह! तब बड़ा मजा आयेगा।" लड़कों ने कहा।

बाहर अँधेरे का राज फैलने लगा। और बच्चे अपने-अपने घर जाने लगे। अमीन की मां शशि से कहने लगी "अब घर जा राजा! तेरी मां फिक्र करती होगी। जा बेटा जा!!"

शशि को मां की याद आई। मेरी मां राह देख रही होगी मेरी। और बच्चों से मेरे बारे में पूछती होगी। इतने में पिता जी की वह कठोर भयानक क्रूर मुद्रा भी उसके सामने आई। घर जाने से वह डरने लगा। "अमीन की मां!" वह अमीन की अम्मा से कहने लगा "मैं तुम्हारे घर में ही रहूंगा। क्या तुम मुझे अपने घर में नहीं रखोगी ? मैं अमीन के साथ ही रहूंगा। एक ही बिस्तरे पर सोएँगे हम। एक ही ओढ़नी काफी होगी हमको। नया बिस्तरा नई ओढ़नी खरीदने की जरूरत नहीं होगी!" शशि के यह मीठे शब्द सुनकर अमीन की अम्मा रो पड़ीं। उनका दिल भर आया। वह गद्गद् हुई।

इतने में अमीन का बाप आया। उसके कंधेपर उसकी धुनकी थी। अमीन ने कूदकर उसकी तांत बजाई। "ऐसा करने से टूट जाएगी भला!" उसके बाप ने कहा। अमीन की अम्मा ने अपने शौहर के कंधे पर से धुनकी उतार कर खूंटी पर टांग दी। अमीन के बाप ने शशि को देखा। "यह कौन है बेटा!" उसने अमीन से पूछा। "यह मेरा दोस्त है अब्बा!" अमीन ने कहा "वह मेरे साथ ही रहेगा। अम्मा ने दो आम दिये।" "बेटा! अब रात हुई!" अमीन के बाप ने कहा शशि से "घर जा! माँ तुम्हारी राह देखती होगी। वालिद फ़िक्र में पड़े होंगे। जा बेटा! घर जा अब!!"

"मुझे यहाँ नहीं रख लेंगे आप!" शशि ने अपना सा मुँह लेकर

कहा "घर में पिता जी मारेंगे। मैंने अमीन को पेन्सिल दी थी। वह हमने तोड़ी। उसके दो टुकड़े किये। पिता जी खफ़ा होंगे, गुस्सा करेंगे, मारेंगे, पीटेंगे। पिता जी ने कहा था घर आते समय पेन्सिल ले आना। नहीं तो घर में नहीं लूंगा। हड्डी नरम करूंगा। मैं नहीं जाऊंगा घर। मैं यहीं रहूंगा। आप बड़े अच्छे हैं। अमीन को कभी नहीं मारते!" शशि की आँखे भर आईं।

" घबड़ाओ मत बेटा!" दादू धुनिया ने कहा "मैं तुम्हारे बाप से कहूंगा इसे मारो मत। रास्ते में नई पेन्सिल भी खरीद दूंगा। डरो मत मैं हूँ!"

दादू धुनिया शशि को साथ लेकर निकला घर में से। रास्ते में उसे नई पेन्सिल खरीद दी दादू ने। शशि खुश हुआ। अब शशि का घर आया। हरदयाल शशि को खोजने बाहर गया था। शशि की माँ घर में थी। रास्ते में दादू और हर दयाल की मुलाकात नहीं हो सकी।

शशि अपनी माँ के पास दौड़ गया। उसके गले दोनों बाहें डाल कर कहा उसने। "अम्मा! बाबू जी नहीं मारेंगे न? तू कहेगी न?" अरे! कहाँ गया था अब तक? मदरसे से सीधा घर आना छोड़ कर कहाँ भटकता था? कितने लोगों से पूछती थी मैं? कहाँ कहाँ खोजा तुझे? अब वे बाहर गये हैं तुझे खोजने। आते ही खफा होंगे। मेरी बातें क्या सुनेंगे वह?

"मैं कहूंगा उनसे?" दादू ने कहा। आपका बच्चा बड़ा मीठा है। रुकूंगा थोड़ा समय। सबों को भाता है वह।" दादू शशि को तारीफ करने लगा।

"शैतान है पूरा?" हरदयाल आये घर में "पता नहीं कहाँ गया गधा! उस दाढ़ीदार के घर गया था। वह घर में नहीं था। उसकी वह बीबी थी। गोया मलका आज़म! कहती है अभी तुम्हारे बच्चे को ले गये हैं घर। तुमसे कैसे नहीं मिले। जात के मुसलमान हैं। एकाध

रोज बच्चे को भगायेंगे।" बकते हुये चढ़े बरामदे पर। वहीं दादू बैठा था। उसको देख कर चमके।

"हरदयाल बाबा?" दादू धुनिया ने कहा सभी मुसलमान क्या बदमाश होते हैं? हमें मुसण्डे क्यों कहते हैं आप? दाढ़ीजार क्यों कहते हैं। दुनियाँ में जो चालिस करोड़ मुसलमान हैं वह क्या सब के सब हराम हैं? अगर आप उनको आये दिन हराम खोर कहते आओगे तो शायद वैसे होंगे भी। बच्चों को गधा गधा कहने से वह वैसे ही बनते है। हरदयाल बाबा! हर जमात में भले बुरे आदमी होते हैं। जाने दो वह बातें। मैंने आप के बच्चे को पेन्सिल दी है। उसको ले आया हूँ। लड़का बड़ा अच्छा है। उसपर खफा मत होना। मारना पीटना नहीं। हम मुसलमान दुष्ट कहलाते हैं। मगर अपने बच्चों को वह छूते भी नहीं!" दादू बोल रहा था।

मगर तुम हिंदू लड़कियों को भगाते हो। गाय पर छूरा चलाते हो हरदयाल तीखे होकर बोल रहे थे।

" अगर तुम गाय बेचोगे नहीं तो कौन मारेगा?" दादू ने कहा " तुम लोग गाय को माँ कहते हो और बेचते भी हो। माता कहते हैं गाय को। दूध पीते हैं भैंस का! माता कह कर माता को लात मारना कहाँ का धर्म? तुम बड़े ढोंगी हो। दुनिया पर दया प्रेम करने की बातें करते हो और घर के बच्चों को मारते हो। हम प्रेम का पहला सबक़ तो सीखें हैं। अपने या पराये बच्चों को नहीं मारते हैं। अपना घर सुधारो पहले, फिर दूसरों से कहो। तुमने मुसलमानों को भला बुरा कहा। मुस-लमानों में बुरे लोग हैं, गुंडे लोग हैं, नादान कमीने लोग हैं। मुझे उसका शरम है अफ़सोस है, मैं शरमिन्दा हूँ। मगर ऐसे लोग नहीं किस जमात में? अगर हिन्दुओं के लिये मरने को मौका आया तो प्रथम मेरी गर्दन तैयार है। रात दिन मैं सोचता हूँ क्या मुझे अपने पड़ोसियों के लिये मरने का मौका मिलेगा?" वह भावना में डूब गया था। वह जबान से नहीं दिल से बोलता था। मगर दिल ही दिल को पहचानता

है। वे दिल खुश दिल का राज क्या जाने ?

"शशी !" हरदयाल ने अपने बच्चे से पूछा "उनके घर कुछ खाया पिया तो नहीं ?" उन्होंने दिया होगा कुछ खाने पीने को। उनको सब गोलकार करना है ! उन्होंने दादू की ओर देखकर कहा गुस्से में।

'ना !' शशि ने कहा—"मैंने दो आम खाये थे !"

"क्या आप मुसलमानों से फल वगैरह नहीं खरीदते ?" दादू ने कहा हम क्या गोश्त खिलायेंगे ब्राह्मण के बच्चे को ?'

"अमीन की माँ बड़ी अच्छी है। वह कभी नहीं मारती है अमीन को !" शशि ने कहा।

"मुआफ कीजिये।" दादू धुनिया ने कहा "मैं जाता हूँ। बच्चे को मारना नहीं है। वह बड़ा अच्छा लड़का है।" वह गया।

"शशी !" हरदयाल ने कड़क कर कहा "अगर कभी फिर अमीन के घर जायेगा तो देख, टांग तोड़ दूंगा। दूसरे लड़के क्या कम हैं ? वह वामन है, लखू हैं, राम रतन हैं। उनसे क्यों दोस्ती नहीं करता ? तुझे यह दाढ़ीजार का लड़का ही क्यों भाता है ? घर सब भ्रष्ट हो जायगा। यह नज़दीक के दोस्त छोड़ कर जाता है वहाँ मुसलमान के घर। वहाँ क्या रखा है ? अमीन का नाम लेना छोड़ दो।"

"पिता जी !" शशि ने कहा "वह वामन बेईमान है। उस रोज अमीन की पेन्सिल उसी ने चुरायी। मैं जानता हूँ। लखू गाली बकता है, और उसके कपड़े कितने गन्दे ! वह नहाता भी नहीं। मैं नहीं चाहता ऐसे दोस्त। अमीन रो पड़ता है जब कि मास्टर साहब मुझको मारते हैं। और सब हँसते हैं। मैं अकेला रहूँगा अगर मुझे आप अमीन के पास जाने नहीं देंगे तो। मगर मैं इन्हें अपना दोस्त नहीं बनाऊँगा !" उसने अपनी रोती आवाज़ में कहा।

"थाली परोसती हूँ। हाथ पैर धो लेना।" शशि की माँ ने कहा।

शशि ने दो कौर खाये किसी तरह। वह जाकर बिछौने पर लेट गया। नींद नहीं आती थी। उसने सुना अपने माता-पिता के संवाद।

"इसके लछन कुछ अच्छे नहीं दीखते।" हरदयाल ने कहा— "अभी बच्चा है।" मां ने कहा, "आज के दूषण कल के भूषण बनते हैं।"

"यह महज जिद्दी ही नहीं।" हरदयाल बोले। "वह आज मुसलमान के घर में जाता है। कल भंगी चमार के घर जायेगा। इस प्रकार का भ्रष्टाचार बड़ा खराब होता है। इससे कुलके नाम बट्टा लगता है। कुल कलंकित होता है।" सुन कर शशि के आँखों में आंसू आये। वह रोने लगा। मगर उसके वह पवित्र आंसू पोंछने वाला बिना अमीन के कौन था? क्या बच्चों के पवित्र आँसुओं से हमारे जमाने का यह कलंक नहीं धो जायेगा? क्या उनके दिल में उठने वाली ज्वालाएँ हिंदू मुसलमानों के द्वेष को नहीं भस्म करेंगी? क्या उनकी आह का तूफान हमारे इस कमीनापन को नहीं उड़ायेगा? धरम क्या यही सिखाता है? भगवान! अगर यही धर्म है तो इस धरम से बचा।

× × ×

ऐसे ही दिन बीतते थे शशि के। एक रोज शाम की बात है। स्कूल छूटा। शशि घर आया। "शशी!" माता जी ने कहा उससे "गवाला गाय ले आएगा अब। उसको बांधो। नहीं तो वह अपने बछड़े के पास जाएगी। बछड़ा दूध पी जाएगा सब। मैं पानी ले आने जाती हूँ ताल पर।" मां गई पानी लाने। शशि गाय की राह देखने लगा। गवाली गाय आंगन में छोड़ गया। वह एक दम गयी अपने बछड़े के पास। अपने बछड़े को देखते ही उसका प्रेम उमड़ आया। स्तन में दूध भर आया। बछड़ा दूध पीने लगा। गाय उसका बदन चाटने लगी।

शशि गाय को बांध न सका। वह पवित्र प्रेम दर्शन करने लगा। "कितनी भूख लगी है उसको!" शशि कहता था "पी! पी!! सब पी!!!" शशि की मां आई गोठ में। बछड़ा दूध पी रहा था। शशि पी-पी कर तालियाँ बजाता था। यह नजारा देख वह क्रोध में पागल हो उठी। अरे यह क्या करता है? तुझे मैंने गाय को बाँधने को कहा

था ! नालायक कहीं का। इतना सा भी काम नहीं करता। बस दिन भर मरने को कहो तो तैयार ! वह गाय को बांधने लगी। बछड़ा रस्सी खींचने लगा।

"अम्मा ! छोड़ उसे ! तू ही कहती थी आधे भोजन से उठाना नहीं चाहिये किसी को ?" शशि ने कहा अपने माँ को।

"हट् ! शैतान !" मां ने कहा।

"तेरा दूध मधु का है न ? तो गाय का दूध उसके बछड़े का क्यों नहीं ?" बछड़े की वकीली की उसने।

"चल यहाँ से।" मां ने एक चांटा जमाया। शशि भाग खड़ा हुआ। "शशी !" मैं और थोड़ा पानी ले आती हूँ जाकर मधू को सुलाओ !" शशि मधु के पास आया। मधु सोया था। वह झुलाने लगा उसको। हँसाने लगा। गाना गाने लगा।

सो जा मेरे नन्ने राजा।
गाय रँभाती दूध तू पी जा॥
चिड़ियां चहकती गान सुनो आ।
मोर पुकारते नाच देख आ॥
पंछी बुलाते उड़ते उड़ते आ।
मां कहती है चुप तू बैठ जा॥ १॥
कोयल कहती गान सीख रे।
फूल है कहता मुसकाना रे॥
चींटी कहती श्रम श्रम श्रम रे।
मां कहती है मदरसे जा रे॥ २॥
कहो भैया किसका सुनेगा ?
स्कूल जाएगा मार खाएगा !
दुनिया में तू प्यार पाएगा।
घर में आकर झिड़की पायेगा॥ ३॥

गाने में वह तल्लीन हुआ। बेचारा गरीब शशि हर किसी को अपना प्रेम देने जाता था। चाहे तो उसका स्वीकार हो या तिरस्कार! वह सहज देना जानता है !!

"औरतों का सा गीत क्या गाने लगा?" माँ ने आकर कहा जनवरी फरवरी कहि, चैत वैशाख, अश्वनी भरणी, अपना स्कूल का अभ्यास करना छोड़कर लगा औरतों का सा गीत गाने।"

"अम्मा!" शशि ने कहा "जो तू गीत गाती है मधु को झुलाते समय। मुझे गीत बड़े भाते हैं। बिना पाठ किये पाठ होते हैं, सुनकर ही आते हैं। तू कहती है मजा से मुझे क्यों रोकती है?"

"अरे! तू क्या लड़की है?" माँ ने कहा।

"लड़कियाँ हमारे मदरसे में आकर हमारी किताबों की कविता जो कहती हैं। हम क्यों उनका गीत नहीं गायें? शशि ने पूछा मधू झुलने में रोने लगा। माँने उसे दूध देने के लिए गोद में लिये। मधु दूध पीने लगा। माँ उसको पुचकारने लगी प्रेम से।

मधु रोने लगा तो उसको दूध पिलाने लगी गोद में लेकर, वह बछड़ा रँभाता था तो उसे बांध रखा। भगवान दयालु है न? क्या वह प्रसन्न होगा ऐसे? उसको भाएगा यह? शशि की प्रश्न मालिका शुरू हुई।

"बस कर अब अपना पांडित्य!" माँने कहा। "अब जाकर रोज का पाठ कर। वे आएँगे। गुस्सा करेंगे। तब लगेगा रोने?" मां ने कुछ गुस्से में कहा। शशि अपना सबक याद करने लगा। हिसाब याद करने लगा। वह धीरे धीरे सबक याद करता था। मन ही मन गुन गुनाता था। "अरे! जरा जोर से कह।" गीत कैसा गाता है बड़े ताव में आकर? अब आवाज बैठ जाती है लबाड़ की! हाथ जोड़कर खड़ा रह और याद कर।" मैं वहाँ गोठ में जाता हूँ। "वहाँ सुनाई देना चाहिये!" हर दयाल ने आते ही कहा।

"आज गोठ में जाने की कोई जरूरी नहीं है!" मां ने कहा "दूध

बछड़ा पी गया आज।" मां ने शशि का पराक्रम सुनाया।

"तू अपना काम क्यों उस पर लादती है?" हर दयाल ने अपनी पत्नी से कहा "देखता हूँ जाकर।" वह गोठ में गया दूध दुहने।

शशि मधु के साथ खेलने लगा। दोनों घोड़ा घोड़ा कर खेलने लगे। "अरे अब तू क्या छोटा बच्चा है घोड़ा घोड़ा खेलने लगा!" हर दयाल ने अंदर आते ही पूछा। सब पाठ याद किये! स्तोत्र, गंगा स्तुति, राम रक्षा, सब हुआ? हरदयाल ने पूछा। मुझे नहीं वह संस्कृत श्लोक भाते। मुझे हिंदी गीत ही अच्छे लगते हैं। बिना पाठ किये याद होते हैं। महज सुनकर याद होते हैं।" शशि ने जवाब दिया। "तो चूड़ियाँ पहन! साड़ी पहन!" हरदयाल ने कहा, "चल मैं सिखाता हूँ श्लोक" शशि वहाँ आया। अपने पिता जी के पास बैठा। पिता जी वायु स्तुति का श्लोक सिखाने लगे।

उत्प्तात्युत कटत्विद् प्रकट कटकट ध्वान संघटनोद्य
द्युदूद स्फुलिंग प्रकट किकिरणोत्कवा तिथो बाधिता गान!!

शशि कहने लगा "अत्पत्ता पुत्तत्तू"...

"अरे अत्पत्ता पुत्त नहीं उत्पत्ता त्युत"...

मुझे नहीं आता वह, मुझे गीत सिखाओ। शशि ने कहा।

"अरे हमने अपने बचपन में यही सीखे।" हरदयाल ने कहा।

"आप अपना संध्यावंदन कर लीजिए मैं थाली लगाती हूँ।" शशि की माँ ने कहा। "पिता जी।" शशि ने कहा कभी आपकी संध्या छन में होती है कभी देर से होती है। वैसा मेरा सबक क्यों नहीं होता छन में?" शशि ने अपनी शंका उपस्थित की। अरे मूर्ख! अगर काम है तो संध्या क्षण में होती है। बाप ने शंका समाधान किया। "तब क्या मैं अपना सबक खतम करूं छन भर में जब मुझे नींद आती है?" शशि ने दूसरा सवाल पूछा। बाप हँस पड़ा। "शशि, अब तेरी चालाकी बस हुई!" माँ ने झूठा क्रोध दिखाकर कहा "चार कौर खा और सो जा चुपचाप।"

खाना हुआ। हरदयाल विष्णु सहस्र नाम कहते आंगन में शत पावली करने लगे। मधु भूलन में सो गया था। शशि अपनी माँ के पास बैठा हुआ था। वह अपनी माँ से अपना शंका समाधान कर रहा था।

उसने पूछा "कृष्ण भगवान का अवतार था न ?"

"हाँ !" माँ ने जवाब दिया।

"तो वह गाय चराता था। मैं क्यों न चराऊँ गाय ? पिताजी से पूछा तो वे गुस्सा करते हैं। कहते हैं तू क्या चरवाह है ? अहीर का लड़का है ?" चरवाह होना क्या खराब है ? कृष्ण चरवाह था। अपने गाँव की गायों को जंगल में ले जाता था। हरा हरा घास चराता था। बाँसुरी बजाता था। साथियों से खेलता था। मैं भी कृष्ण बनूंगा नदी पर जाकर बाँसुरी बजाऊँगा, खेलूंगा, नाचूंगा, कूदूंगा, जंगल के फूल ले आऊंगा। उसकी माला बनाकर तेरे गले में पहनाऊँगा। गजरे तेरे बालों में लगाऊँगा। मैं नहीं चाहता वह मदरसा। मैं चरवाह बनूंगा, कृष्ण बनूंगा !" शशि अपनी मीठी पवित्र भावनाओं को दर्शा रहा था।

"शशी, ऐसी पागल की सी क्या बातें करता है तू ! यह क्या दारिद्र्य सूझता है तुझे ? कह मैं तहसीलदार बनूंगा, सब जज बनूँगा, कलेक्टर बनूंगा ! यह सब छोड़कर कहता है मैं चरवाह बनूंगा। यह कैसी भिख-यारी सूझती है तुझे। क्या खेतों में हल जोतना चाहता है ?" माँ ने पूछा।

हल जोतना क्या बुरा है ? बलराम के हाथ में तो हल ही है ? कृष्ण बाँसुरी बजाता, गाय चराता तो बलराम हल चलाता। बैल की आँखें कैसी काली नीली होती हैं ? मैं बैल को नहीं मारूँगा। चुभाऊंगा। हमारे पड़ोसी लाखू भैया बैलों को मारता है। अनी चुभाता है। परसों वह बैल रो रहा था। आज जो बैलों को अनी चुभाता है कल भगवान उसको चुभायेगा। है न ? ऐसों पर भगवान खफ़ा होता होगा, गुस्सा करता होगा। उसकी आँखें लाल होती होंगी। शशि ने कहा।

"शशी, जा सो जा अब !" माँ ने कहा "अगर मैं कुछ काम कहती

तो तुझे नींद आती है। अब क्यों नहीं आती वह नींद ?"

"मैं क्या काम करने से इन्कार करता हूँ। मुझे काम करना आता है। मगर मैं किसी को नहीं भाता हूँ। तुझे भी मैं नहीं भाता ?" उसने दीन होकर पूछा।

"मुझे मधू भाता है। मदरसे न जाने वाला लड़का किसको भाता है ? चरवाह किसको भाता है ? लोग हसेंगे, बुरा भला कहेंगे। कहेंगे, कैसा लड़का है यह ? हल चलाता है। न आता है पढ़ना न आता है लिखना। तू बिलकुल नहीं भाता है मुझे !" माँ ने कहा।

"तो क्या मैं भगवान् को भी नहीं भाता हूँ ? क्या वह भी मुझसे प्रेम नहीं करता है ?" शशि ने कहा।

माँ बाप का न सुनने वाला लड़का उसको नहीं भाता। माँ ने कहा।

तो ध्रुव कैसे भाता था उसे ? और प्रल्हाद ? मुझे ध्रुव की कहानी खूब भाती है। प्रल्हाद होना खूब भाता है ! मैं जाऊं ध्रुव सा जंगल में। मुझे दर्शन देगा वह भगवान ? शशि ने कहा।

"जा सो जा अब। सुबह उठकर मदरसे जाना है।" शशि जाकर सो गया "भगवान क्या मुझ पर प्रेम करेगा ? वह मुझे गोद में लेगा मुझे दर्शन देगा ?" इसी विचार में सो गया वह।

हरदयाल अंदर आये। "मालूम होता है शशि सो गया।" उन्होंने पूछा अपनी पत्नी से।

"सो गया। पागल है, पूछता है क्या मैं कृष्ण का सा चरवाह बनूं ?" मां ने कहा।

"वही उसके नसीब में है। स्लेट पर भी कभी गाय तो कभी मोर का चित्र खींचने बैठता है। मैं भी तो क्या करूं ? सुख की नौकरी नहीं है उसके नसीब में। वही मिलेगा जो नसीब में लिखा है। हर दयाल उदास होकर बोले।

× × ×

"अम्मा ! मुझे खाजा दो मेरा स्कूल का समय हुआ।" शशि

ने कहा।

रोज रोज क्या खाजा मांगता है ? चरना जानता है ठीक पढ़ना लिखना नहीं भाता। मां ने कहा।

"अम्मा दे न जलदी ! फिर नहीं मांगूंगा मैं आज !" उसने कहा।

"जा वहीं डिब्बे में बिस्कीट रखे हैं उसमें से दो बिस्कीट ले। दो ही लेना ज्यादा नहीं।"

मां की आज्ञा लेकर शशि अंदर गया। दो बिस्कीट उठाये। वह जेब में रखकर स्कूल को चल दिया।

अरे ! वह खाकर जा। जेब में रखकर क्या जाता है। मां ने कहा।

मैं मदरसे में जा कर खाऊँगा। शशि ने कहा।

"मदरसे में जाकर क्यो खाएगा ? वहां दूसरे लड़के होते हैं। पागल ! घर पर ही खा जा !" मां ने कहा।

एक यहाँ खाता हूँ। एक स्कूल में ले जाता हूँ। शशि ने समझौता करना चाहा।

"दोनों यहाँ खाने चाहिये। देख कल से खाजा बंद !" मां ने धमकाया।

एक अपने दोस्त अमीन को दूँगा मैं ! अमीन की मां मेरे लिये आम भेज देती है अमीन के साथ। क्या तू नहीं देगी मेरे दोस्त को ? अमीन बड़ा अच्छा है। अगर पंडित भी मुझे मारते हैं तो वह रो पड़ता है। शशि ने कहा।

"अरे ! कैसा बेशरम है तू शशी !" मां ने कहा "सौ दफा कहा तुझे उस अमीन की दोस्ती मत कर। उससे बात मत कर !!"

"मैं ले जाऊँ एक बिस्कीट ?" शशि ने फिर अपनी बात दुहराई।

"नहीं ! बार बार क्या पूछता है ?" मां ने कहा।

"तो मुझे नहीं चाहिये तुम्हारा खाजा !" शशि ने कहा।

"क्या इतनी मस्ती ? फिर कभी मांगेगा खाजा ! कैसे फेंक दिये यह बिस्कीट ? शैतान ! बे अकल !" अम्मा ने मंत्र पुष्प दिये।

कभी नहीं मांगूगा अब खाना तुमसे ! अकेला ही खाना है तो मुझे नहीं चाहिये वह खाजा बाजा ! दोस्तों के साथ खाने में मज़ा ! नहीं तो मैं बिलाव हूं अकेला अकेला खाने ! शशि वैसे दुःखी हृदय से स्कूल गया। कविता का अंतर था। गुरुदेव कविता सिखा रहे थे।

मीठा ज्यादह नहीं खाना।
देखा जो सो नहीं उठाना ॥
कभी लड़ाई न किसी से करना।
गाली कभी न किसी को देना ॥

"वामन ! तू खाता है या नहीं मीठा।" गुरु जी ने पूछा।

मुझे नहीं भाता है गुड़। वामन ने कहा "वह अँगुलियों में चिपकता है !"

"उसपर कितनी मक्खियाँ बैठती हैं !" शशि ने कहा मुझे मीठा आम बड़ा भाता है !"

आम खाकर जी नहीं उकताता। गुरुदेव ने कहा "यहाँ मीठा का अर्थ मीठा आम नहीं है। मीठा का अर्थ है मिठाई। पेड़े लड्डू, बर्फ़ी, गुलाब जामुन, चीनी, गुड़ वगैरह। अरे लखू ! नाखून क्या चबाता है ? गधा ! मीठा खा मगर नाखून मत खा ! आगे क्या है ?

गाली कभी न किसी को देना !

अबे हरामखोर अमीन ! गुरुदेव ने कहा "बाहर क्या खाक देखता है ?"

"गुरु जी ! हरामखोर यह गाली है न ?" शशि ने पूछा।

निरा उल्लू है ! शिक्षक ने कहा "इतना भी नहीं समझ में आता ?" अरे यह भी एक गाली है !"

"तो आप गाली कैसे देते हैं ?"

यह किताब है छोटे बच्चों के लिये। इसकी नसीहत उन्हीं के लिये

है। बड़े आदमी अगर गाली बकते हैं तो कोई हर्जा नहीं है। समझे? अब खामोश बैठ! मुझे पूरी कविता खतम करनी है। गाली नहीं देनी चाहिये। गाली किसको कहते हैं? गाली का मतलब है अपशब्द। लल्लू! लिख उस तखते पर। अरे! अपशब्द द को ब जोड़ना। अरे! इतना भी नहीं समझता। अब तक जोड़ाक्षर नहीं आते। द्वित्व नहीं आते! जरा यहाँ आ! लल्लू की हथेली जरा लाल हुई। और लिख लो अपनी बहीं पर। लड़ाई याने झगड़ा, कलह। अच्छा अब क्या है? भूगोल।

किताब लो हाथ में। उप सागर किसको कहते हैं? द्वीप किसको कहते हैं? झील कैसा होता है? सब याद कर आये हैं न? नहीं तो देख!

आज बुधवार है। कहानी का अंतर है। बच्चे चहकने लगे।

आज बुधवार है या गुरुवार? गुरुदेव ने पूछा।

बुधवार! बुधवार! उस प्रश्न का उत्तर मिला। कहानी कहिये।

अरे रोज रोज क्या कहानी कहूँ मैं? आज नहीं कोई कहानी!

मैं कहूँ? शशि ने पूछा।

अरे यह क्या कहेगा खाक? एकाध कहानी आती भी तो है?

एक ही क्यों दस आती हैं। शशि ने अभिमान से कहा।

दस? कह एक। ठीक खड़ा रह कर कह। अरे हँसो मत कोई! अगर कोई हँसेगा तो पीछे रोना पड़ेगा!! शिक्षक ने कहा।

बालक शशि कहानी कहने लगा "एक छोटा सा देहात था। उस गांव में एक छोटी सी लड़की थी। उसका नाम था चंपा। चंपा की मां मर गई थी। उसके बाप ने दूसरा ब्याह किया था। चंपा की सवतेली मां बड़ी कठोर थी। अच्छी नहीं थी। चंपा को मारती थी। गालियाँ देती थी। खाना नहीं देती थी। काम खूब कराती थी। छलती थी। रुलाती थी। एक रोज उसका बाप दूसरे गांव में जाने लगा। चंपा उसके पास आकर रोने लगी। बाप ने कहा रोवो मत।

"तुझे खिलौने लाऊँगा मैं। गुड़िया ले आऊँगा।" उसने अपनी घर-वाली से कहा "इसे गाली मत दो, तकलीफ मत दो, मारो मत। बिना मां के बच्चों को मारना पाप है। छलने से दुःख मिलता है।" घरवाली ने कहा "आप अपने काम पर जाइये। मैं इसे दुःख नहीं दूँगी। प्रेम दूँगी। प्रेम से खिचड़ी पका दूँगी। अपनी गोद में सुलाऊँगी। मक्खन मिश्री खाने दूँगी। आप फिक्र मत कीजिये। मैं इसका सब ठीक करूँगी।"

उसका बाप बाहर गांव गया। चंपा के हाथ शुरू हुए। उसके हाथ दाग दिये गये। हथेली पर पुरी फूलकर आयी! चंपा रोती थी। एक दिन उस दुष्ट स्त्री ने चंपा को मार डाला। उसके टुकड़े टुकड़े कर गाड़ दिये। उस पर एक अनार का पेड़ लगाया।

कुछ दिन के बाद बाप आया। खिलौने ले आया, गुड़िया ले आया, घर में चंपा नहीं। उसको दुःख हुआ। उसने वह अनार का पेड़ देखा। पेड़ देख कर वह खुश हुआ। वह रोज उस पेड़ के नीचे स्नान करने लगा, उसको पानी डालने लगा, उसको ठीक खाद डालने लगा। एक रोज पेड़ में फूल आया। लाल लाल फूल, सुन्दर फूल, एक ही एक फूल। हरे हरे पत्तों में वह लाल-लाल फूल देख कर बाप खुश हो उठता था। वह फूल सूखकर फल हुआ। फल बढ़ा। कितना बड़ा हुआ वह फल! गागर सा बड़ा। सभी देख कर दंग रहते थे, हैरान होते थे, अचरज करते थे।

कुछ रोज के बाद वह फल पका, उस बाप ने फल तोड़ा। सबसे पहले पहला आया हुआ फल। अड़ोसी पड़ोसी लोगों को दावत दी। सभी आए, अचरज भरा फल देखने आये। बाप वह फल काटने लगा।

धीरे काटो मैं हूँ अंदर! धीरे काटो मैं हूँ अंदर!!

फल में से आवाज आयी। अरे! यह तो चंपा की आवाज, मेरी लाड़ली की आवाज। बाप ने हलके हाथों हौले हौले काटा वह फल, अंदर से चंपा बाहर आयी। उसने देखते ही अपने बाप के गले में बाहें डाली। सब बात कही। बाप को बड़ा दुःख हुआ। गुस्सा भी

आया। उसने अपनी घर वाली को बुरा भला कहा, धमकाया, घर से निकाल दिया। तब वह रोने लगी, माफी मांगी, गिड़गिड़ाने लगी। चंपा को भी दया आयी। उसने अपनी मां को मुआफ करने को कहा। तब बाप ने भी उसको घर में रख लिया। इसके बाद चंपा खुश रहने लगी। चंपा खुश हुई। हम भी अब खुश होंगे।"

आज मुझे कुछ काम है। शिक्षक ने कहा, "जलदी घर में जाना है। तुम सब अपने अपने घर को जाओ।"

"जलदी छुट्टी जलदी छुट्टी !!" कहकर लड़के नाचते कूदते बाहर आये।

× × ×

आज शशि की पाठशाला बंद थी। उसकी छुट्टी थी आज। वह घर में ही रहा था। उसकी मां मन्दिर में गयी थी। बाप दूसरे गांव को गया था। शशि अकेला था। घर में एक बिल्ली ने बच्चे डाले थे। वह बिल्ली के बच्चे म्याऊँ म्याऊँ करते घर भर घूमते थे। उन्हें भूख लगी होगी। शशि के बाल मन ने कहा। उसने कपाट खोला। उसमें दूध रखा था। वह एक तश्तरी में उड़ेला और तश्तरी उन बच्चों के सामने रख दी। वह दूध पीने लगे। शशि को आनन्द हुआ, उसका दिल उछलने लगा, रोम रोम गाने लगे।

इतने में उसकी मां आयी। उसने शशि की पीठ 'नरम की। बिल्ली के बच्चों को दूध मिला और शशि को मार।

मां ? उनको भूख लगी थी इसलिये मैंने दूध डाला। शशि ने कहा। क्या उन्होंने आकर कहा था तुमसे कि भूख लगी है ? "मां ! मधु तुझे कब कहता है ? वह रोता है तू दूध देती है। म्याऊँ म्याऊँ बिल्लियों की भाषा है। मैंने थोड़ा सा दूध डाला उनको वह अपने ही घर के हैं न आखिर ? मैंने क्या गलती की ? बस तुम्हें सहज मारना आता है। सभी मारते हैं मुझे। मैं अपना चुप रहता हूँ। किसी को नहीं भाता हूँ मैं।" वह अपने आप गुनगुनाने लगा। होंठ पुटपुटाने लगा।

अमीन का घर उसके लिये बंद था, अब। दूसरा कौन दोस्त था उसका ? बाहर गया। गाय के बछड़े, जंगल के मोर नदी की मछलियाँ, वह सब उसके दोस्त। वह नदी किनारे गया। सीटी बजाते चला वह। किनारे पर जा खड़ा रहा। गोया वनदेवी का पुत्र है। एक पेड़ ने उसके सिर पर दो फूल गिराये। देवताओं ने क्या पुष्प वृष्टि की उस पर ?

फिरते फिरते वह एक जगह रुक गया। वहाँ एक छोटा सा परिंद गिरा हुआ था। वह अभी जिंदा था। अरे रे ! क्या हुआ उसको ? उसको मारा किसी ने ? पंख पर चोट आयी है। शशि ने अपना कुरता उतारा। उस पंछी को कुरते में रखा। उसको लेकर घर के लिये रवाना हुआ।

अरे ! ऐसा खुला क्यों आया ? कहाँ गया तेरा कुरता ? पागल तो नहीं हुआ ? मां ने पूछा।

अम्माँ ! यह देख, कितना अच्छा लगता है ? अभी बच्चा है ! जंगल में गिर पड़ा था। उसको उठा लाया हूँ। देख कैसा है ? अच्छा है न ? हम पालेंगे उसे। थोड़ा सा दूध देगी न ? शशि ने पूछा।

"कहाँ है वह ?" मां ने कहा "उठा कर पटक देती हूँ उसे। तुझे बछड़े भाते हैं। बिल्ली के बच्चे भाते हैं। अब यह परिंद ले आया !"

शशि भागते दौड़ते अमीन के घर आया। "अमीन ! यह देख कितना सुहावना परिंद !"

"क्या वह जिन्दा रहेगा ?" अमीन ने कहा—"मर तो नहीं जायेगा ? पंख पर चोट लगी है।"

अमीन ! तेरे पास एक पिंजड़ा था न ? उसमें रखेंगे हम। एक कपास की गद्दी बना लेंगे। दोनों दोस्तों ने उसको पिंजड़े में रखा। शशि ने अपनी संपत्ति अपने दोस्त के हाथ में सौंपदी। शायद घर में मार पड़ेगी ! वह दौड़ता हुआ घर आया। शशि कभी कभी घर वालों की आँख बचा कर अमीन के घर जाता था। शशि को देखते ही वह पंछी नाचने लगता। पशु पक्षी भी प्रेम की क़द्र करते हैं। पशु में कृतज्ञता का भाव है। शायद इन दोनों का पूर्व जन्म का कोई ऋणानुबंध

होगा। पूर्व जन्म का न हो तो भी इस जन्म का तो था ही। प्रेम और प्रीति विश्व के ज़र्रे ज़र्रे में है। मगर हमको पहचानने वाला चाहिये?

× × ×

बरसात के दिन आने वाले थे। चीटियाँ बड़ी तेज़ी से अपना काम करने लगी थीं। एक रोज शशि के घर में चीटियों की कतार लगी।

मां! देख वह चीटियों की कतार। बरसात आने वाली है इसलिए क्या वह धूम मचा रही हैं? उनके मुँह में वह सफेद सफेद सा क्या है? वह क्या उनके बच्चे हैं? कैसी सीधी कतार बनाकर जाती हैं वह?

अरे उन चीटियों की तरफ देखते क्या बैठा है? मधु को उठा ले पहले। उसको काटेंगी वह। दो बार झाड़ू लगाया। मगर फिर आयीं वह। दिनभर सताया इन्होंने।

शशि ने मधु को उठा कर दूर रख दिया। वह फिर उन चीटियों का मज़ा देखने आया। इतने में शशि की मां गरम गरम राख ले आयी उसने वह राख और अंगारे उनपर डाल दिये। चीटियाँ तड़फने लगीं, जल भुन गयीं। यह क्या किया तूने? शशि ने पूछा "वह जल गयीं सब! वह उस राख में से उन चीटियों को अलग करने लगा। मगर कितनी चीटियों को अलग करेगा? उसकी मां ने और राख और अंगारे बरसाये उन पर। शशि रोने लगा। क्या करे अब? उसे कुछ भी नहीं सूझता था। आखिर वह अंदर गया। लोटा भर पानी लाकर उन अंगारों पर गिरा दिया उसने। आग में बची खुची चीटियां पानी में डूब कर और बह कर मर गयीं। माता का क्रोध और पुत्र की दया दोनों से उन बेचारियों को मौत ही मिला!!

यह क्या किया तूने? माता ने कहा "घर में सारा कीचड़ हुआ न? गंदगी अब। मां को सताना क्या अच्छा है?"

मैंने क्या सताया तुझे? वह चीटियाँ जल रही थीं। मुझसे देखा नहीं जाता था।

अगर देखा नहीं जाता तो बाहर क्यों नहीं गया ?

ऐसा करने से भगवान खफ़ा नहीं होगा हम पर ?

बिलकुल नहीं ! उन चींटियों को बाहर क्या कम जगह थी ? उनके भी अपने मकान हैं। यहाँ क्यों आई मरने ?

उनको हमारा घर अच्छा लगा होगा।

मुझे चिढ़ावो मत। चला जा यहाँ से। सताने आया है मज़ज।

ऐसा मत बोल तू मुझे। मैं क्या नहीं चाहिये तुझे ?

तुझे नहीं चाहती हूँ। मुझे मेरा मधु अच्छा लगता है !

यह सुनकर उसका दिल रो उठा। वह बाहर गया। बाहर कहाँ गया वह ? नदी पर। नदी ! भगवान की बहती करुणा। शशि नदी पर जा बैठा। शशि की आँखें भी बहती थीं एक ओर निसर्ग का प्रेम और एक तरफ़ पवित्र हृदय की वेदना ! गोया वह एक संगम है।

आसमान में बादल छाये। अब पानी गिरेगा। आसमान भी अपनी प्रेम की वर्षा करेगा। पंछी दौड़ धूप करने लगे। मोर नाचने लगे। शशि उठा। वह भी नाचने लगा। निसर्ग प्रेम में वह अपना दुःख भूल गया। सृष्टि का बालक सृष्टि की गोद में अपना प्रेम नृत्य करने लगा, लालित नृत्य करने लगा। पेड़ झुलते थे। लतायें झूलती थीं। हवा तान देती थी। नदी गाना गाती थी।

बादल छूट गये। अस्त को जाने वाला सूरज संध्या के साथ आसमान में विश्व के जीवों को दर्शन देने आया। कितना सुंदर था वह नज़ारा ? शशि वह देखने लगा। कितने रंग ? कितने आकार कितने प्रकार ? काले बादल पर सुनहरी किनार कितने अच्छे लगते थे ? गोया रेशम के कपड़ों पर जरी का कशीदा किया हुआ है। शायद आज किसी विश्व साम्राज्य के सम्राट का खजाना खुला था। विश्व निर्माता की शान थी वह। सृष्टिमाता की शोभा थी। जगत पिता के वैभव थे।

सूर्य अस्त हुआ। आसमान में चन्द्रमा का दर्शन हुआ। वह अपने घर के लिए चला। क्यों जाऊँ मैं घर ! मैं किसी को नहीं भाता

घर में। पिता जी मारते हैं। माँ भला बुरा कहती है, लोग मूर्ख कहते हैं। स्कूल के लड़के मुझे हैराते हैं। मैं घर क्यों जाऊँ? भगवान के घर जाऊँ मैं? मगर रास्ता कौन दिखाएगा मुझे? ध्रुव को नारद ने रास्ता दिखाया था। मुझे कौन दिखाएगा? वह सोच रहा था। उसके हृदय में अनंत लहरें लहर मार रही थीं। निष्पाप पवित्र बाल हृदय का तूफान था वह!

× × ×

पंडित जी! मैंने फीस दी थी। उस शनिवार को क्या नहीं मैंने दी थी! शशि ने कहा।

मगर यहां कहां लिखी है? मैंने क्या वह हड़पली? क्या बच्चों तुम्हें याद है इसने फीस दी थी? शिक्षक ने बालकों की गवाही ली।

उस रोज मैंने दी थी। लल्लू ने दी थी। वामन ने दी थी। इसने नहीं दी। यह झूठ बोलता है। लल्लू ने कहा।

उस रोज अमीन और शशि बिलायती मिठाई खा रहे थे। सुखू ने कहा।

अच्छा चोरी कर के बिलायती मिठाई खाते हैं और कहते हैं मैंने उस रोज फीस दी थी। शिक्षक ने आंखें लाल कर पूछा "बोल तुमने बिलायती मिठाई खाई थी या नहीं? कबूल करो दोनों नहीं तो ऐसा पीटूँगा ऐसा पीटूँगा। बस याद रखेगी।

वह बिलायती मिठाई अम्मा ने दी थी। हमने खरीद कर नहीं खाई थी। अमीन ने अपनी सफाई दी।

चोरी करके झूठ बोलता है? चोर तो चोर और फिर मक्कार! शिक्षक ने कहा।

खुदा की कसम वह अम्मा ने दी थी! अमीन ने अल्ला को बुलाया मदद में।

ठहर अब तेरे खुदा को लाता हूँ। शिक्षक ने शशि को खूब पीटा अमीन को भी काफी बकशीस मिली। मगर उन्होंने कबूल नहीं किया।

वह कैसे कबूल करेंगे ? उन्होंने गुनाह किया भी नहीं था।

शिक्षक ने एक चिट्ठी लिखकर वामन के हाथ में दी शशि के बाप को देने के लिये। उसमें लिखा, शशि ने अब तक अपनी फीस नहीं दी। बच्चे कहते हैं उसने विलायती मिठाई खरीद कर खाई। तो पूछ ताछ कर देखना। वगैरह लिखा था उसमें।

शशि घर आया। आज उसे अपना मकान शेर की गुफा सी लगती थी। उसका दिल काँपने लगा था। स्कूल की मार से उसका बदन टूट गया था। वह अत्यंत दुःखी था। झूठा आरोप और अपमान से उसका कोमल पवित्र बाल हृदय रौंद दिया गया था। उसने आते ही कहा "मुझे आज अच्छा नहीं लगता। मैं खाऊँगा नहीं। ऐसा ही सो जाऊँगा।" वह बिस्तर पर जा लेट गया। घर में चिराग जले। बाहर से शशि का बाप अंदर आया। उसने पूछा "आज शशि जल्दी क्यों सोया ?" मां ने कहा, कहता है अच्छा नहीं है। भूख नहीं लगती है। धूप में घूमता है। पानी पीता है। सर दर्द करता होगा। सोने दे !

हरदयाल हाथ पैर धोये। इतने में पड़ोस के वामन ने शिक्षक की चिट्ठी ला दी। हरदयाल ने वह पढ़ी बस पीछे क्या था ? पहले ही नीम उसपर कड़वा चढ़ा था। शशि के कमर में एक लात लगाई। वह चिल्ला कर उठ बैठा। ढोंगी ! सोंगी ! अच्छा नहीं लगता ! उठ हराम खोर ! यहाँ तक पहुँची अक्ल। फीस के पैसे विलायती मिठाई में जाने लगे। घर में क्या खाने को नहीं मिलता ? कहो विलायती मिठाई ली या नहीं ? अब तुझे जिन्दा नहीं छोड़ता !

हरदयाल उसे बैल की तरह मारता था। वह अपनी दया जनक दबी जबान में कहता था "मैंने चोरी नहीं की है। मैंने विलायती मिठाई नहीं खरीदी। मैंने मास्टर साहब को फीस दी थी। मैं झूठ नहीं बोलता हूँ। मुझे मारो मत !"

"मारो मत ? फीस कहाँ है ? क्या मास्टर साहब बेइमान हैं ? चल मेरे घर में कदम मत रख।" शशि को उसके बाप ने मारते मारते दरवाजे

तक पहुँचाया। गर्दन पकड़ कर बाहर ढकेल कर दरवाजा बन्द किया।

बेचारा शशि! वहीं आंगन में रोते खड़ा रहा! रोने की भी सीमा होती है। कहाँ तक रोएगा? यकायक आसमान में बादल छाये। वर्षा शुरू हुई। आसमान भी क्या रोने लगा? शशि के लिये तारे, आसमान, हवा, पेड़ पत्ते सभी रोने लगे! आसमान के बादल छूट गये। तारे बालक के अश्रु से चमकने लगे। थर-थर काँपते थे। शशि ने हाथ जोड़ कर कहा, "भगवान! कहाँ है रे तू? तू प्रह्लाद के लिये खम्भे से बाहर आया मेरे लिये क्यों नहीं आता? क्यों नहीं पिता जी से कहता कि शशि ने चोरी नहीं की! वह चोर नहीं है! बिना चोरी करने के प्रथम सभी मुझे चोर कह कर क्यों मारते हैं? भगवान तू आ और मुझे अपने घर ले जा!!"

शशि आसमान की ओर देख पुनः पुनः प्रार्थना करने लगा। हाथ जोड़ने लगा। आसमान में एक तारा टूटा। शशि के मन में आया। वह देवदूत आकर कहेगा पिता जी को। शशि चोर नहीं है। उसने फीस के पैसों से विलायती मिठाई खरीद कर नहीं खाई है। शशि दरवाजा खुलने की राह देख रहा था। मगर निराशा! भगवान को भी क्या दया नहीं आती? वह मन ही मन तड़फने लगा।

शशि खौफ़ खाने लगा। वह गया गोशाला में। वहाँ गाय थी। वह वहीं जा बैठा। वह सोई हुई कपिला गाय उसे चाटने लगी। उसके कोमल बदन पर उठे हुये दाग चाटने लगी। उसके बदन पर लाल काले नीले निशान उठे थे। कहीं बेंत के तो कहीं अँगुलियों के। कौन मरहम लगाएगा उस पर? कौन तेल लगाएगा? कौन सेंकेगा? जेल में बेंत मारने पर कम से कम पट्टी बांधते हैं। घर के जेल में वह भी नहीं! गाय चाटने लगी। शशि बिलखने लगा। "माँ माते है तू" शशि ने कहा तू ही मेरी माँ बन। चाट मुझे। मैं तेरा बछड़ा हूँ!!

वह वहाँ बैठा-बैठा थक गया। गाय का बछड़ा वहीं कुछ दूर बाँधा गया था। उसके सामने थोड़ा सा घास बिछा कर शशि सो

गया। उन धर्म माता के सामने दो बछड़े सोये हुए थे। गो माता अपनी प्रेम भरी आँखों से उनको देख रही थी।

वहाँ दादू धुनिया का अमीन भी रोता हुआ घर गया। उसने सभी बातें अपने बाप से कहीं। "अमीन !" दादू ने कहा 'बेटा ! तुमने सचमुच फीस के पैसों की मिठाई नहीं खा ली ? अगर ऐसा किया हो तो सच-सच बता !

"नहीं अब्बा !" अमीन ने कहा "मुझे याद है शशि ने फीस दी है। मास्टर साहब ने उन्हें जानवर की तरह पीटा। मुझे भी मारा। मगर उसको ज्यादह। घर में चिट्ठी भी भेज दी है। शशि के अब्बा उसको और पीटेंगे। अब्बा ! उसे हम अपने घर में क्यों नहीं रख लें ? शशि कितना अच्छा है। वह सबों को भाता है। गाय बछड़ा उसको चाहते हैं। पंछी उसे चाहते हैं। चींटियाँ उसको नहीं काटतीं। यह पंछी उसी का है। बस वह आया यह पिंजरे में नाचने लगता है। मधु-मक्खी भी उसको नहीं काटती। मगर वह अपने वालिद को नहीं भाता। उसकी अम्मा भी उसको "जहन्नुम में जा" कहती है। अब्बा ! मेरा शशि कितना अच्छा है। कितना रहमदिल। उसका दिल मक्खन से भी ज्यादह नरम है।

शशि की तारीफ कर रहा था अमीन किसी बाल कवि की तरह। उसका वह वर्णन सुन कर दादू की आँखें भर आईं। कुछ समय रुक कर दादू ने कहा अमीन बेटा ! मुझे एक बात सूझी है। मैं शशि के घर में जाता हूँ और कहता हूँ शशि की जेब में से मेरे अमीन ने चुप-चाप पैसे उठा लिये थे। शशि नहीं जानता था इस बात को। उसने सोचा फीस दी है। घर में आने के बाद अमीन ने कबूल किया है। यह लीजिये आपके पैसे। आप शशि पर गुस्सा मत कीजिये। अमीन ! चलेगा न ऐसा करने से ?

"यह झूठ है न ? और मुझे स्कूल में सभी चोर कहेंगे। झूठ बोलने पर क्या खुदा नाराज़ नहीं होगा हम पर ?"

"ना बेटा खुदा नाराज़ नहीं होगा। तेरी दोस्ताना मुहब्बत देख कर वह खुश होगा। दुनिया तुझे चोर कहेगी। तुझ पर थूकेगी मगर खुदा तुझे गोद में लेगा। जो कुछ तू कर रहा है वह अपने दोस्त के लिये कर रहा है बेटा!"

अच्छा! वह सब अच्छा ही होगा। आप क्या मेरा बुरा चाहेंगे? बस मेरे शशि को कोई दुःख न हो। वह खुश रहे। यही चाहता हूँ मैं!

दादू शशि के घर चला। दस ग्यारह का समय था। वह हरदयाल के घर के आंगन में आया। उसने हरदयाल को पुकारा। हरदयाल सोया हुआ था। वह उठ कर आया बाहर।

"कौन है इस समय?" हरदयाल ने बाहर आकर कहा।

"मैं दादू!" दादू ने कहा आपका शशि बेकसूर है। पैसे अमीन ने उठाये थे। उसने घर में आकर कबूल किया। यों तो वह अच्छा लड़का है। हाँ कभी-कभी गलतियाँ करता है। आखिर बच्चा ही ठहरा! आपका शशि बड़ा अच्छा है, नेक है, मीठा है। उसको नहीं मारना नहीं धमकाना। लीजिये यह पैसे! माफ कीजियेगा!

ओह! आपका लड़का यह भी जानता है! मैं कितनी दफा कहता हूँ शशि को तू उसके संग मत जा। मगर सुनता ही नहीं। आज ठीक मरम्मत की है उसकी। हड्डी नरम की है।

कहाँ है वह प्यारा शशि? सोया होगा न?

ना! आज भूखा रखा है उसे।

"ऐसा मत करो हरदयाल! मदरसे में उस्ताद ने पीटा। घर में तुमने। इस प्रकार के सताने से शायद मर जायगा एक रोज़!"

"क्या मरता है? भगवान को क्या ऐसे शैतान के बच्चे भाते हैं वह अच्छे अच्छे फूल चुनता है। वह तो सहज सताने को पैदा हुआ है पता नहीं किस जनम का बैर चुकाने आया है लड़का होकर। खाई है आज मार। एक दिन खाने से क्या मरता है?"

कम से कम बच्चे पर तो मुहब्बत करो हरदयाल !

"हम हिंदू मुहब्बत के नाम से सिर चढ़ाना नहीं जानते हैं। हमें गुण प्रिय है। अक्ल प्रिय है। महज बच्चे नहीं !"

"अक्ल क्या चाटने की ? उसका दिल देखो। कितना पाक दिल ! "जिंदगी का राज दिमाग में नहीं है हरदयाल ! दिल में है। शशि का दिल ! आसमान का तारा है, गंगा का पानी। पाक साफ ! उसे प्यार दो। वह प्यार का भूखा है। उसकी जबान गोया शहद से सनी है। उसको प्यार करो भाई प्यार करो !"

दादू चर गया। हरदयाल और शशि की मां उसको ढूँढने लगे शशि की मां को तो बार बार बुरा लगता था। आखिर मां का दिल ! मगर अपने पति के सामने उसकी एक भी नहीं चलती थी। दोनों शशि को खोजने लगे। "शायद कूँएँ में तो नहीं कूदा ?" शशि की मां के दिल में एक लहर दौड़ गई। उसको बछ़ी भाती है। बछड़ों से वह हिल मिल जाता है। "जरा गोठ में जा देखेंगे।" पति से कहा उसने। दोनों गोठ में गये। वहीं बछड़े की गोद में घास बिछाकर सोया था वह परमहंस ! "उठ घर में जा !" पिता ने उसको जगाया।

"पिताजी ! आसमान के तारे ने आ कहा न कि आपके शशि ने पैसे नहीं चुराये ! मैंने पैसे नहीं चुराये थे। मैं यहीं सोता हूँ। गाय ने मेरा बदन चाटा। बछड़े के पास बड़ी गरमी है। यहीं सोऊँगा मैं ?" शशि ने कहा।

"ना बेटा ! मेरा शशि अच्छा लड़का है। वह चोर नहीं है ?" माता के यह प्यार के शब्द सुनकर शशि को अच्छा लगा कुछ। वह उठकर मां की अंचल में मुँह छिपाकर सिसकने लगा। मैं तुझे भाता हूँ न मां ! मुझ पर नहीं न कभी खफ़ा होगी ? मैंने नहीं लिये थे न पैसे ?"

सो मत ! अब चल घर में ! हरदयाल ने धमकाकर कहा। शशि घर में गया। मां ने कुछ खिलाया। वह सो गया। उसके सपने में

अमीन आया । मगर उसने क्या कहा । यह शशि सुनह उठकर भूल गया !

सुबह हुई । शशि अब भी रात की मार की वजह से कुम्हलाया हुआ फूल सा सूख गया था । उसके बदन पर लाल नीले निशान थे । वह उठा ! हाथ मुँह धोया । भगवान को प्रणाम कर मदरसे जाने निकला । उसके बाप ने एक कागज और फीस के पैसे दिये उस्ताद को देने के लिए । उसका आनंद जो पिता का क्रोध दूर होने से हुआ था मार की कसक से फीका पड़ा हुआ था । वह दिन के चांद-सा स्कूल को रवाना हुआ ।

शशि स्कूल में पहुँचा मगर अमीन नहीं आया था । वह बैठा चुपचाप अपनी जगह पर । घंटी हुई । शिक्षक आये । शशि ने फीस के पैसे और चिट्ठी उनके हाथ में दी । शिक्षक ने वह पढ़ी । शिक्षक ने कहा । "उस अमीन ने इसके पैसे चुराये थे । चोर है । बदमाश है वह । स्कूल में आते ही उसका नाम कटवा दूँगा । अब तक आया भी नहीं है । आने दो हराम खोर को !!"

"कौन कहता है अमीन चोर है ?" शशि ने कहा उठकर । "मेरा अमीन अच्छा है । मैंने आप को फीस के पैसे दिये थे । आपने इन्कार किया । पिता जी ने पैसे दिये । मेरा अमीन चोर नहीं है । वह अच्छा है !" तो क्या मैं चोर हूँ ? शिक्षक ने कहा—"अपने बाप की यह चिट्ठी पढ़ । अमीन के बाप ने तेरे बाप के पास आकर कहा सब । मगरूर ? बैठ नीचे !"

अमीन देर से मदरसे आया आज । आते ही और लड़के काना-फूंसी करने लगे । सभी उसकी ओर उँगली उठाने लगे । शिक्षक गुर्राकर कहने लगे मेरे मदरसे में धोखेबाज बच्चों की आवश्यकता नहीं है । झूठ बोलनेवाले चोरों के लिये जगह नहीं है । उनकी वजह से कभी मेरी नौकरी जाएगी, रोटी जाएगी । चल ! बाहर जा इस वर्ग से । मुँह काला कर यहाँ से……!!

अमीन ने हँसकर कहा "मगर मैंने चोरी नहीं की है। यह सब झूठा है। वह एक नाटक था। मैंने शशि को मार से बचाने के लिये ऐसा किया था।"

"यह सब सुनने का नहीं मैं। अब तेरा नाम रजिस्टर से काट दिया है। मुँह काला कर। नहीं तो गर्दन पकड़वाकर धक्के देकर निकाल दूँगा मैं।"

अमीन रोते रोते घर गया। शशि भी अपना बस्ता लेकर स्कूल से निकला। अमीन के लिये स्कूल स्मशान था अब। अरे तू कहाँ निकला। खींचो उसे नीचे। बैठ था आकर कुचल दूँ ? चला बस्ता लेकर ! शिक्षक शिकारी कुत्ते की तरह टूट पड़े उस बालक पर।

वह रोते रोते बैठा। उसका ध्यान नहीं था वर्ग में। वह अमीन के पीछे पीछे जाना चाहता था। अब कौन है स्कूल में मेरा साथी ? मेरे लिये कौन रोएगा अब ? मेरे आँसू कौन पोंछेगा ? मुझे खाना कौन देगा ? प्रेम कौन देगा ? प्रीति कौन देगा ! हमदर्दी कौन दिखाएगा ! बिना हमदर्दी का जीवन कीड़े का जीवन है। माँ बाप सब मुझे भूलकर चले जाएँगे। हजारों विचार आते थे उसके मन में। विचार, विकार और भावनाओं के तूफान से उसका दिल फटा जा रहा था। शशि अमीन के घर नहीं जा सकता था। स्कूल में ही उन दो दोस्तों की भेंट होती थी। अब वह नहीं होगी। संध्या और प्रभात नहीं होंगे। सारी ही कुम्हलानेवाली धूप !

अमीन गया रोते रोते अपने घर। बाबू काम पर जाने के लिए निकला था। क्या हुआ अमीन ? बाप ने पूछा। अमीन ने सब बातें कहीं। "मत रो। तू अपना बस्ता रख मेरे साथ चल। मेरा बेटा ! बूढ़े बाप की मदद कर। खुदा की यही ख्वाहिश है।" अमीन अपने अब्बा की मदद करने लगा। अपने स्वधर्म में तल्लीन होने लगा। स्वधर्म से वह खुदा की इबादत करने लगा। उसका प्यारा अब्बा उसको अपने कुलाचार की तालीम देने लगा। वह स्कूल के नाम

से चलाये जाने वाले जेल खाने से रिहा हुआ। नये दिव्य-भव्य-विशाल विश्वविद्यालय में जीवन शिक्षा ग्रहण करने लगा।

× × ×

एक दिन हरदयाल ने सोचा शशि को कहीं सीखने के लिये रखना चाहिये। नहीं तो वह नहीं सुधरने का। हरदयाल की एक बहन थी बिलासपुर में। वहाँ रखने का तय हुआ। शशि की बुआ के घर जाने की तैयारी होने लगी। आखिर वह बिलासपुर भेज दिया गया।

बिलासपुर में शशि को अच्छा नहीं लगा। वहाँ न गाय थी न बछड़ा। न नदी थी न जंगल और न मोर। वहाँ उसका मन भाया आमीन नहीं था। उसको देखते ही नाचने वाला और गाकने वाला वह पिंजड़े का पंछी नहीं था। महज पों पों करनेवाली मोटरें, फट् फट् करनेवाली मोटर सायकिलें और फक् फक् करने वाला मिल के निर्जीव जीवन से वह तंग सा आ गया। सारा जीवन निर्जीव और यंत्रकाराय गोया मनुष्य के मशीन बनाने का कारखाना।

शशि का नाम मदरसे में लिखवाया गया। उसका जिस्म मदरसे में जाता था मगर दिल कहीं और था। वह न हँसता था न बोलता था। वह अब फीका पड़ने लगा उसके जीवन में कोई रस नहीं था। नीरस जीवन। उसकी सेहत भी बिगड़ने लगी। मगर कौन देखेगा उसकी तरफ? कौन था उसकी ममता का आदमी?

शशि की बूआ के दो लड़के थे। एक था रघुनाथ जो शशि से कुछ बड़ा और दूसरा मीठाराम शशि से जरा छोटा। मीठाराम मीठा था। शशि से मुहब्बत थी उसकी मगर रघुनाथ वैसा नहीं था। वह मिल जुल कर नहीं रहता था। उसको सच्चा झूठा का कोई विधि निषेध नहीं था। वह हर बात में लड़ने भिड़ने पर उतारू हो जाता था। गाली बकना तो उसका स्वभाव सा हो गया था। वह हर बात पर शशि से लड़ता था मगर मीठा राम शशि की तरफदारी करता था। उसकी हिमायती करता था। अपने भाई की गलती बताता था।

रविवार का दिन था । सुबह का समय था । लड़के सब [illegible] का अभ्यास करने बैठे थे । रघुनाथ ने गलती से अपनी दावात उँड़ेल दी । उसी का पैर लगा था । तब वह चिल्ला उठा—"शशि ! देखता नहीं ? अंधा क्या हो गया ? अब दावात जो गिराई ? बाबूजी आकर खफ़ा होंगे मुझपर ! अम्मा ! देख शशि ने मेरी दावात गिरा दी !" रघुनाथ की माँ आकर शशि को भला बुरा कहने लगी । आँखें क्या फूट गईं तेरी ? इतनी बड़ी दावात नहीं देखी ? अगर नाचना ही था तो आँगन में क्या जगह नहीं थी ? माँ बाप ने योंही क्या यहाँ भेजा है ? मैं देखती हूँ दूसरे का बच्चा है । माँ बाप से दूर है । कहेगा बूआ जी ने सताया । सो मैं चुप रहती हूँ । यह शेर होता जाता है ! रघुनाथ की माँ का मुँह चलता ही रहा था बस सीता राम ने कहा "अम्मा ! पैर लगा भाई साहब का । वह अपना इलज़ाम लगाता है शशि पर । यही शशि को सताता है । यही उसको मुँह चिढ़ाकर नाचता था । वह देख उसी के पैर में स्याही लगी है।" रघुनाथ सीता-राम को मारने दौड़ा । "झूठ बोलता है । कौन नाचता था मैं या शशि ? मैं जानता तक नहीं था दावात गिर गई है । जब पैर पर स्याही पड़ी तो पता चला ।"

बूआ चली गई अंदर । वह हरदयाल की ही बहन थी । दिल में न था प्रेम न रहम । बड़ा ओछा था उसका दिल । वह रघुनाथ और सीताराम को चार चार रोटियाँ देती तो शशि को एक । खाते समय रघुनाथ और सीताराम को दो दो चमचम थी तो शशि को आधा चमचम भी नहीं मिलता । अपने बच्चों को चार चार चमचम कभी मिलता था शशि को एक चमचम । सीताराम कहता "अम्मा ! शशि को और थोड़ा यहाँ देना !" तो वह कहती उसको आधे दिन जुकाम होता है । अगर भी ज़्यादा खायेगा तो बुखार आयेगा ।

एक दिन शाम का समय था । शशि नल पर गया पानी लाने । बूआ ने कहा था पानी लाने । नल के नीचे फिसलन हुई थी । किराये-

न जाने क्या-क्या आयेगा वहाँ। खूब दूकाने लगेंगी। मिठाई की दूकानें, खिलौने की दूकानें, तस्वीर और किताबों की दूकानें। मेला जाने में मजा है। सभी मेले में जाने निकले। रघुनाथ मीठाराम और शशि। रघुनाथ और मीठाराम को आठ-आठ आने मिले जेब खर्च के लिये। शशि को एक आना। मुझे नहीं चाहिये वह पैसे! शशि ने कहा, "मैं नहीं जाऊँगा मेले में।"

"क्यों? बूवा कड़क पड़ी क्या घमण्ड है। अपने आप को बड़ा नवाब, बड़ा नवाब जादा समझता है। ले वह आना और जा मेले में। बच्चों को वही करना चाहिये जो बड़े कहते हैं।"

शशि ने लिये वह चार पैसे। मीठाराम ने कहा शशी! हम दोनों के पैसे एक करेंगे। मैं वही लूँगा जो तू चाहेगा। चल शशि मेरे साथ चल। भाई साहब को अकेला जाने दे।

रघु अकेला-अकेला गया। उसको रास्ते में और आवारागर्दी करने वाले दोस्त मिले। उसने रास्ते में ही एक गेंद ली। एक बेलून लिया। कुछ मीठे चने खाये। कुछ चटपटे में उड़ गये। वह मन्दिर में नहीं गया। नदी पर नहीं गया। बस मेले में घूमा। आवारापना किया। घर आकर गेंद खेलने बैठा।

सर्दी खूब थी। शशि और मीठाराम हाथ पकड़कर चलते थे। रास्ते में एक अंधी सखूबाई का गाना गाती थी।

मारते पीटते घर में लाई। जवान बेटी सखु जी की।
तीनों ने बैठ के कसम खाई। दाना पानी बंद करने की।
रस्सी लेके उसे कस के बाँधा। बाहर आया जी मांस का खंडा!
सखु जी सहे अनंत बाधा। भगवान के ध्यान में सदा।
सखु जी कहे पंढरी राया। दे मुझे चरणों में प्रेम की साया!

ऐसा वह करुण गीत चला था। शशि को उस गीत में खुद का जीवन दीखता था। शशि ने वह गाना सुना। आँसू गिराये। उस अंधी बुढ़िया को तीन पैसे दिये। मीठाराम ने पूछा। "वह एक पैसा

क्यों रखा पास ?" "भगवान पर चढ़ाने के लिए मन्दिर में जाते समय खाली हाथ नहीं जाना चाहिये !" शशि ने कहा। मीठाराम ने पूछा मैं क्या खरीदूँ इन आठ आने का ? मैं क्या करूँ ? शशि ने कहा "वही ले जो तुझे भाता है !" शशी ! मुझ पर भी क्या खफ़ा हुआ तू ? वह ध्रुवनारायण की तस्वीर लूँ ? तुझे खूब भाती है न वह ? तुझे ध्रुव की कहानी बड़ी भाती है ! "लो" शशि ने कहा।

वह दोनों तस्वीर बेचने वाले के पास गये।

तस्वीर फरोख्त ! उस ध्रुव नारायण की क्या कीमत ? मीठाराम ने पूछा।

तेरे पास कितने पैसे हैं ? पैसे हैं या योंही पूछता है अपना ! हाँ भाई तस्वीर उड़ाओगे।

हम चोर नहीं हैं। शशि ने कहा—

हमारे पास आठ आने हैं। देता है तस्वीर ?

अच्छा दो आठ आने ! उसने तस्वीर दी। मीठाराम ने वह अपने सीने से लगाई। शशि ने उस पर अपना माथा टेका। दोनों मन्दिर में गये। क्या गर्दी थी वहाँ ? हाय तोबा था ! उस भीड़ में मीठाराम गायब हुआ। शशि को भगवान का दर्शन नहीं हुआ। हमारे यहाँ बड़े बड़े मूँछवाले मर्दानगी दिखाकर भगवान का दर्शन करने आगे-आगे घुसते हैं। मगर बाल भगवान को कुचलते हैं। उनको धकेल कर आगे बढ़ने में अपनी शान समझते हैं। सच्चा भगवान तो बच्चों में होता है। निर्दोष बच्चों में जो भगवान नहीं देखते वह क्या पत्थर में भगवान देखेंगे ? वह भगवान में भी पत्थर का दर्शन करेंगे। पत्थर का दर्शन करते-करते उनका दिल भी पत्थर का बना है, नहीं तो वह मासूम बच्चों को इस तरह धक्के नहीं देते। पैरों तले नहीं कुचलते ! शशि ने एक हाथ में तस्वीर पकड़ी थी। वह उन बहादुर मर्दों की भीड़ में से आगे जाने की कोशिश करता था। बस किसी ने धक्का दिया। उसके हाथ की तस्वीर नीचे गिर पड़ी। उस पर दूसरे

का पैर पड़ा। कांच टूट गयी शशि का दिल भी टूटा। मेरी भगवान की तस्वीर! शशि ने कहा। उसे उठाया। रोता हुआ बाहर आया।

अब बूआ ख़फ़ा होगी। गुस्सा करेगी। मुझे मोतीचूर देगी खाने को। उसको रुलाई सी आई। वह तस्वीर की दूकान ढूंढ़ने लगा। आखिर दूकान मिली।

दूकानदार भाई! तुम्हारी दी हुई तस्वीर टूट गई। शशि ने कहा।

"तो मैं क्या करूँ?"

"दूसरी दोगे?"

खूब! मैं क्या दीवाला निकालूँ? ऐसी टूटी तस्वीर लेकर अच्छी तस्वीर देने का धंधा मैंने नहीं सीखा! दूकानदार ने कहा।

"क्या आप को नन्हें-मुन्ने बच्चों पर दया नहीं आती?"

"क्या तेरे पास पैसे हैं?"

मेरे माँ बाप यहाँ नहीं हैं। मेरे पास पैसे नहीं होते।

तो तस्वीर कैसे मिलेगी?

मेरे पास अपनी टोपी है। वह लीजिये और तस्वीर दीजिये?

शशि की टोपी नई थी। दूकान दार ने टोपी देखी; नयी है। व्यापार घाटे में नहीं है। "ला यह टोपी।" दूकानदार ने कहा। टोपी ली। वह टूटी तसवीर भी ली और दूसरी ध्रुव नारायण की तसवीर दी। शशि खुश हुआ। घर का रास्ता नापने लगा। शशि के सिर पर टोपी न देख कर मीठाराम ने पूछा शशि तेरी टोपी कहाँ गयी? भीड़ में कहीं गिर गई होगी। माँ खफा होगी शशि। कहाँ गिरी? शशि का उस ओर ध्यान भी नहीं था। उसने कहा मीठा यह तसवीर कैसी है? ध्रुव कैसा आसन लगाकर बैठा है। मुझे भी भगवान की भेंट होगी ऐसी? मीठा! दर्शन देगा वह?" दोनों की आँखें भर आयीं!

शाम का समय था। चारों ओर चिराग जल रहे थे। शशि और मीठाराम घर आये। "कितनी देर की तुमने। रघुनाथ कब का आया है।" मीठाराम की माँ ने कहा "क्या लिये उन आठ आने

का ?" मैंने तसवीर खरीदी। मीठाराम ने कहा "तसवीर क्यों खरीदी। अगर गिर गई तो चूर चूर होगी। अक्ल कहाँ है? और तू अपने एक आने का क्या लाया ?" बुवा ने शशि से पूछा "मैंने एक अंधी को दिया अपना आना !" शशि ने नम्र होकर जवाब दिया "बड़ा उदार है न ? मैं जानती थी हमारे भूत के गुण। इसी लिये तो एक आना दिया। आठ आने देती तो ऐसे ही जाते। पर शशी! तेरी टोपी कहाँ है ? अरे! ऐसा चुप क्यों है ? जबान क्या बैठ गयी ? मैं पूछती हूँ, कहाँ है तेरी टोपी ? मेरी टोपी......मेरी टोपी......शशि से झूठ नहीं बोला जाता था। वह वहीं उलझ जाता था। मीठाराम ने कहा "शशि की टोपी भीड़ में खो गयी !" "शशी! तू कल कैसे जायगा स्कूल में ?" बूवा ने पूछा मगर शशि यह असत्याचरण हजम नहीं कर पाया। "बूवाजी! मुझसे भीड़ में मीठाराम की तसवीर गिर कर टूट गयी तो मैंने टोपी देकर दूसरी तसवीर खरीदी।" शशि ने नम्रता से कहा। क्या तेरी अक़ल! क्या दौड़ धूप! अकेले बात सुनती हूँ बस जी करता है............छप् छप् ....!!

शशि चुप चाप ऊपर गया। आँसुओं से ध्रुव नारायण की पूजा की उसने।

दूसरे दिन मदरसे जाने का समय आया। शशि के सिर पर टोपी नहीं थी। मीठाराम माँ के पास गया। "माँ! शशि के लिये टोपी !" "जा रघुनाथ की पुरानी टोपी डाल उसके सिर पर !"

माँ! वह पूरी फटी हुई है! मीठाराम ने कहा

चलेगी उसको! माँ ने कहा

रघुनाथ ने उस रोज स्याही पोछी थी उससे। वह कैसे पहनेगा ? वही पहननी चाहिये उसको। नहीं तो घर जा बाप के पास नयी टोपी ले आ!

वही पुरानी फटी हुई स्याही से रंगी हुई रघुनाथ की बड़ी सी टोपी शशि के सिर पर रखी गयी। मीठाराम को बुरा लगा। पर वह

क्या करेगा ? शशि स्कूल में गया और लड़के उसको छुर्गा करने लगे। किसी ने बंदर कहा तो किसी ने लंगूर। कोई स्वांग कहे तो कोई विदूषक कोई सर्कस का रिंग मास्टर कहता है तो कोई जोकर। और वह लगता भी ऐसा ही था। सारा स्कूल शशि के पीछे। शशि को उस टोपी पर क्रोध आया। उसने वह गटार में फेंक दी। सभी तालियाँ बजाने लगे। कौंव कौंव करने लगे। सियार के झुँड में सिंह सा वह सभी का मुकाबला करता था।

घंटी हुई। सभी लड़के अपने अपने वर्ग में गये। शशि भी गया अपनी जमात में। अरे! ऐसा नङ्गा सिर क्यों आया ? सभी लड़कों ने कहा "मास्टर साहब आयेंगे तो क्या कहेंगे ? घर जा उठ!" मगर शशि शांत था। गोया शुक मुनि, ध्रुव, प्रह्लाद! दूसरी घंटी हुई। मास्टर साहब आये। कुर्सी पर बैठे। सभी लड़के हँसने लगे। शिक्षक ने अपने सिर पर हाथ फेरा। कहीं चोटी तो बाहर नहीं आयी है ? इतने में उनका ध्यान गया शशि पर! वह नंगा सिर बैठा था।

शशी! टोपी कहाँ है ?

मेरी टोपी नहीं है पंडित जी!

टोपी नहीं है ? तो स्कूल में क्यों आया ? यह शिक्षक का अपमान है। स्कूल का अपमान है! यह स्कूल है धर्मशाला नहीं!

"बिना टोपी का क्या नहीं चलेगा! मेरे पास पाटी है पेन्सिल है, किताबें हैं। सब कुछ है।"

"पाटी पुस्तक न हो तो चलेगा मगर टोपी होना आवश्यक है। ऐसा नंगा सर बैठना अमंगल है। भारत का अपमान है। तुझे शरम नहीं है। मगर यह नहीं चलेगा।"

ध्रुव नारायण की तसवीर में ध्रुव के सिर पर टोपी नहीं है। उनके सामने स्वयं भगवान् खड़े हैं। भगवान के सामने बिना टोपी के बैठने पर भगवान का अपमान नहीं होता है तो आपका कैसे होता है ? मेरे माँ बाप यहाँ नहीं हैं। मैं अगर ऐसा ही नंगा सिर बैठूँ तो

क्या नहीं चलेगा ?

"नहीं चलेगा । अगर सिर पर टोपी है तो मेरे वर्ग में बैठो । नहीं तो बाहर जाओ ।"

शशि घर आया । रास्ते भर वह रोता आया । बूवा जी जूठन उठा कर यों ही लेटी हुई थी । शशि की आहट पाकर वह ऊपर गई । शशि चुपचाप रो रहा था ।

"लौट क्यों आया घर को ?"

"वर्ग में बैठने नहीं देते हैं मास्टर साहब !"

क्यों ?

सिर पर टोपी नहीं इसलिये ।

दी हुई टोपी क्या की ?

फेंक दी ।

क्यों फेंक दी ।

स्कूल के सभी बच्चे मेरे पीछे लगे इसलिये ।

"कहाँ फेंक दी ?"

गटार में !

वाह वाह ! धन्य है तेरी वे वेशरमी ! टोपी फेंक दी और वेशरम कहता है आकर । न लज्जा न भय न धाक ! चला जा तू अपने घर ! हमारे घर तुझे जगह नहीं है । गोया सत्व हरण करने आया है ।

शशि खामोश था । बूवा बक-बक कर रही थी । शशि चुपचाप ऊपर जाकर सो गया । बूवा भी जा लेट गई । शामको स्कूल की छुट्टी होते ही मीठाराम घर आया । रघुनाथ भी आया । मीठाराम शशि के पास गया । "उसका चेहरा फ़क पड़ गया था ।"

"शशि क्या हुआ तुझे ?"

"क्या कहूँ मीठा ?"

"रो मत शशि ! आँखें खराब होंगी । अभी देख रो-रो कर आँखें कैसी लाल हुई हैं । मीठाराम ने उसके आंसू पोंछे । शशि तुझे बुखार

आया है। बदन गरम लगता है।"

"आने दो!"

सीताराम ने मां के पास जा कहा। मां शशि को बुखार आया है। कैसा बुखार और क्या? मां ने कहा ढोंगी है पक्का। कहो उसे उठ और चार कौर निगलकर सो जा। स्कूल जाना नहीं चाहता है। आज टोपी नहीं कल बुखार आया!" सीताराम शशि के पास गया। "जरा दो कौर गरम-गरम भात खा ले। बड़ी आराम देगा!"

शशि हाथ पैर धोने गया नल पर। हाथ में लोटा था। चक्कर खाकर गिर पड़ा। लोटा भी गिर पड़ा। बूआ ने उसके पित्तरों का उद्धार किया। सबों का नामोच्चारण हुआ। गोया श्राद्ध का पितृ तर्पण कर रही है। जबान ही नहीं चली हाथ भी चला। कमजोर शशि चकराने लगा। वह किसी तरह दो कौर खाकर बिछौने पर जा लेटा।

दो रोज हुए बुखार नहीं उतरा है। आज तीसरा रोज शशि के बाप को तार करने की बातें हो रही हैं। चौथे रोज तार जाता है। शशि का बाप आता है। शशि आँखें नहीं खोलता। वह आँखें खोलना चाहता है। मगर १०५ से अधिक बुखार है। आंखें खोली नहीं जातीं उससे। हरदयाल पास आता है। पितृ हृदय पसीजता है। "शशी! बेटा शशी!" वह पुकारता है। माथे पर हाथ रखता है। अब तक शशि ने अपने बाप की जबान से इतनी मीठी प्यारी पुकार नहीं सुनी थी। वह उसकी दाद देना चाहता है। आँखें खोलने की कोशिश करता है। मगर कामयाब नहीं होता। मुरझाये हुए कमल नहीं खिलते। फिर से हरदयाल पुकारता है। "बेटा! देख तेरा बाप आया है! मुझसे बोल न एक बार!" शशि इस बार भी अपनी कोशिश में ना कामयाब होता है। हरदयाल उसका माथा अपनी गोद में लेता है। अपना मुख उसके मुख के पास ले जाता है। स्नेहमयी मीठी आवाज में पुकारता है। "बेटा! शशि!" शशि आँखें खोलता है। अपनी पूरी ताकत लगाकर बाहें पिताजी के

गले में डालता है। "पिताजी ! पिताजी !!" आगे उससे बोला नहीं जाता। वह कुछ कहना चाहता है। पर .... !

शशी ! कुछ देर रुक कर हरदयाल कहता है। "क्या चाहिये तुझे ?"

"पिताजी !" शशि कहता है अपनी क्षीण आवाज से। "मुझे अपना प्यार दीजिये। प्रीति दीजिये। मुझे बेटा कहिये। अब तक ऐसा नहीं कहा आपने। मुझे मारिये नहीं। अब तक आपने खूब मारा। मुझे नहीं मारेंगे न अब ? बेटा कहेंगे न ? प्यार करेंगे न ?"

उसको और भी खूब बातें कहनी है। मगर वह थक गया है। आँखें मूँदता है। खामोश होता है। उसके होंठ सूखते हैं। जबान खुश्क होती है। वह खूब प्रयत्न कर पा......नी कहता है। हरदयाल उसके मुँह में पानी डालता है। हरदयाल का हृदय अब पूरा पिघल गया है। वह पहाड़ पसीजा है। उनके हृदय सागर में तूफान मचा है। वह शशि को अब कुछ कुछ समझने लगे हैं। उसके पवित्र दिव्य बाल हृदय का थोड़ा थोड़ा दर्शन अभी होने लगा है। मगर अभी संपूर्ण दर्शन देने को बाकी है।

डॉक्टरों की राय से उसको घर ले जाने का तय होता है। मोटर-कार खड़ी है। हवा न लगे इसलिये कांच के दरवाजे चढ़ाये हैं। बर्फ की थैली पास रखी है। बर्फ भी रखी है। घर जाने का समय आया है। सीठाराम अपनी ध्रुव नारायण की तसवीर ले आता है। वह हरदयाल के हाथ में देकर कहता है वह उसे बड़ी भाती है। यह उसके लिये ले जाइये आप। मेरी मां शशि पर खफा होती थी। मैं उसके लिये भगवान से प्रार्थना करूंगा।...!! उससे बोला नहीं जाता वह रोता है।

शशि मोटर में सुलाया गया। उसका पिता उसके पास जा बैठा। मोटर चली। शशि का सिर उसके पिता की गोद में है। इसी का उसे समाधान है। वह उसके चेहरे पर झलकता है। आंखें हँसती हैं !! आज शशि पर उसका बाप प्रेम करता है। शशि राजा है।

प्रेम का बादशाह ! वह अपने बाप का हाथ अपने हृदय पर रख लेता है । माथे पर चढ़ाता है । वह प्रेम सिन्धु अपने पिता के शुष्क हृदय में प्रेम उँडेल रहा है । उसको प्रेम का सबक देता है । हरदयाल कभी कभी शशि का माथा चूमते हैं । उनकी आँखें एकाध प्रेमाश्रु शशि के चेहरे पर गिराती हैं । वह मुर्झाया हुआ फूल खिलता है ।

पिता जी ! आप की जांघ दुखेगी । मेरे सिर नीचे रखिये ! शशि को अपने पिता की फिक्र । कहीं उनकी गोद तो नहीं दूखेगी ।

नहीं बेटा ! बच्चों को गोद में लेने से क्या मां बाप की गोद दुखती है ? इसी में माता पिता का सुख है ! भाग्य है, धाम है । वैभव है, मुक्ति है, सर्वस्व है !

× × ×

शशि अपने घर में एक छोटी सी चारपाई पर सोया है । उसकी मन भाई ध्रुव नारायण की तसवीर उसके पास पड़ी है । उसे गले लगाकर वह सोता था ।

शशि जग गया है । वह अपने बाप से कहता है "अमीन को बुलाओ न जरा !"

तू अच्छा हो अमीन आएगा तुझसे मिलने । बाप कहता है ।

बाहर वर्षा हो रही है । वर्षा की बूंदें टपटप कर रही हैं ।

आज आसमान क्यों रोता है ? शशि पूछता है अपने पिता से "पीछे एक रोज आपने मुझे खूब मारा था । फीस के पैसों के बारे में । मैं बाहर था । आसमान इसी प्रकार रोता था उस रोज । आज आपने मुझे नहीं मारा । मगर और किसी ने अपने बच्चे को मारा होगा ! है न ?"

"शशि तू बोल मत ! तुझे बोलने से तकलीफ होगी । तू शांत हो रह बेटा !" हरदयाल ने कहा । वह दवा लाने गया । वहां झूलन में मधु रोने लगा । मां तू मधु को झुला । जा देख वह रोता है । वहां जाकर तू गीत गा । उसे झुला । तेरे गीत मुझे खूब भाते हैं । मां रोनेवाले

नन्ने मधु के पास गई। उसके झूलने की डोरी पकड़ कर गीत गाने लगी उसको झुलाते हुए।

गायें हैं चरती कोमल कल्ला कान्हा बजाते हैं बांसुरियां।
कान्हा बजाते हैं बांसुरिया गोया पेड़ पे कूकती कोयलिया॥
गायें हैं चरती हरी हरी दूब मधु को देती हैं मीठा मीठा दूध।
मधु को देती है मीठा मीठा दूध दूध क्या है वह जीवन का बूंद॥
मोर का मुकुट माथे पे शोभे अधरों पे धरे बांसुरिया।
अधरों पे बांसुरिया औ हाथों में है सदा लकुटिया।
गोपाल कृष्ण आ मेरे राजा नन्ने को जरा प्यार तू देजा॥
शशि को जरा प्यार तू देजा प्यार से जीवन पुष्प उगा जा।

माता के मीठे गीत सुन रहा था शशि। पवित्र संगीतानंद में मगन था। प्रेम के नशा में मस्त था। वह कहता था मन में मैं अच्छा होऊँगा तो कान्हा होऊँगा, गायें चराऊँगा, बाँसरी बजाऊँगा, सबों को प्रेम का अमृत पिलाऊँगा। गोपाल कृष्ण होने का सुपना देख रहा था वह। मोर मुकुट पहनने का विचार कर रहा था। इसी विचार में शशि को नींद आई। वहाँ मधु भी सो गया।

अमीन को शशि के आने की खबर मिली। अमीन बार-बार याद करता था शशि को। वह उस पिंजड़े के पास जाकर उस पंछी से पूछता कब आएगा शशी? तुझे आती है उसकी याद? छोड़ दूँ मैं तुझे? जाएगा तू शशि के पास? ले आएगा उसकी खबर? पहुँचाएगा उसे मेरी चिट्ठी? चोंच में पकड़कर पहुँचाएगा यह मिठाई? अमीन की बातें सुन कर पंछी नाचता, चहचहाता, कूदता और फुदकता!

अब्बा! अमीन ने कहा "शशि बीमार है। मेरे लिये आपने अच्छी नरम-नरम गद्दी बनवाई है। क्या वह शशि को देंगे? पहुँचा दीजिये न जरा! मेरी गद्दी कहने पर शशि को प्यारी-प्यारी लगेगी। आराम पड़ेगा उसे। और कितनी नरम है वह? नरम-नरम उस नई गद्दी पर सोएगा मेरा शशि।"

दादू की आँखें भर आईं अमीन का मित्र प्रेम देखकर। वह अपने बच्चे का दिल पहचानता था। उसकी कद्र करता था। वह हरदयाल के पास गया। सब बातें कहीं। लीजिये यह गद्दी गोया नरम-नरम अमीन का दिल है। उसके प्रेम की देन मत ठुकराइये। अमीन ने यह भेजी है। उसके प्यार का अपमान मत कीजिये। स्वीकार कीजिये इसको।

शशि के पिता इन्कार नहीं कर सके। वह शशि के पास ले गये। शशी! बेटा! यह तुझे अमीन ने भेज दिया है। "कितनी खूबसूरत है। कितनी नरम है।" वह नरम-नरम सुन्दर गद्दी शशि के नीचे डाली गई। वह क्या गद्दी थी? अमीन का हृदय था वह। उसमें अमीन का प्यार था। उस प्यार की गरमी पहुँचती थी शशि को। शशि ने अपने बाप से पूछा। "अमीन क्यों नहीं आया अब तक? वह क्या मुझ पर खफ़ा हुआ? या आपने उसपर गुस्सा किया? पिता जी अमीन पर गुस्सा मत कीजिये न! मास्टर साहब जब मुझे मारते तो महज अमीन मेरे लिये रोता था। अब भी रोता होगा वह मेरे लिये। बुलाओ न उसे!"

"अच्छा बेटा! तू अच्छा हो जायेगा न? अमीन भी आयेगा।"

अमीन नहीं उसकी गद्दी तो है। यही समाधान था शशि को। मगर शशि का बुखार नहीं उतरा। वह बढ़ता ही गया। बस हरदयाल के दिल में एक शक आया। शायद इस मुसलमान ने प्यार के नाम पर कुछ जादू टोना तो नहीं किया? जब से मेरा प्यारा शशि उस गद्दी पर सोया बुखार बढ़ता गया। बस शक आग की तरह बढ़ा। हरदयाल ने एक रोज शशि के नीचे से वह गद्दी उठायी। उसे बाहर ले गया। रास्ते पर जलायी। यह सब अमीन देख रहा था। वह किसी न किसी तरह छिप कर शशि से मिलना चाहता था। अन्दर घुसने का धीरज नहीं होता था। वहीं कहीं तिकड़म कर रहा था। उसको असह्य वेदनायें हुईं। अपने प्यार की यह दशा देखकर उसका दिल रो

उठा। वह रोने लगा। घर में जाकर सब ख़बर उसने अब्बा से कही उसने। दादू भी गंभीर हुये। दुखी हुआ कहां हुआ। पर क्या करेगा?

शशि की बीमारी बढ़ती गयी। गंडे जलाने से काम नहीं हुई। वह अब बेहोश ही रहा करता है। किसी ने कहा हरदयाल! क्या किया तू ने? वह गद्दी नहीं थी। अमीन का मधुर प्यार से भरा हृदय था। वह तू ने जलाया उसी प्रेम की गरमी से शशि जी रहा था। तू ने अमीन का दिल जलाया। शशि का जीवन जलाया। अब आया नहीं हरदयाल! क्या किया तूने? अपने बच्चे को अपने हाथ से मारा। पैर से कुचला! मछली का पानी तोड़ा। उसके जीवन की ज्योति बुझा दी! कितना द्वेष? कितनी नफरत? कितनी कड़वाहट? अमृतमय जीवन को विषमय बनाया तूने!"

शशि शांत पड़ा था। "अमीन!" कभी-कभी बेहोश शशि पुकारता था। गोया उसका आखरी राम नाम चला था। राम! उसमें प्रेम है इसीलिये राम है। नहीं तो यम और राम में क्या अन्तर? "अमीन! अमीन!!" शशि का तड़पना जारी था।

"शशी!" अमीन ने पुकारा "अमीन!" शशि ने आँखें खोलीं। झट उठा वह। अमीन के गले में बाहें डालीं। दो तोड़े हुये दिल एक हुये। एक आत्मा दो शरीर!

"अमीन! शशी!!"

शशी! अमी······न!!

शाम का समय था। हरदयाल चिराग़ जलाने अन्दर गया था। समय पाकर अमीन छिप कर अन्दर आया था। हरदयाल ने देखा एक मुसलमान घर में। बीमार के बिस्तरे पर!!

"हट!" हरदयाल ने कहा। "चल यहाँ से!" हरदयाल उस पर गरज कर दौड़ा। हरदयाल उसका हाथ पकड़ कर खींचना चाहता था। अमी······न! शशी······!! शशी ······! अ······मी···न!!

हरदयाल क्रोध से अन्धा हुआ था। पागल हुआ था। वहीं पर

एक काठी थी। उठा कर अमीन पर लगाई! ओह! पहली काठी में वह गिरा! उसकी हड्डी टूटी! अन्धा क्या एक काठी से चुप होगा। एक दो तीन चार……!!!

अ……मी……न……दा……आ!!!

शशि ने आँखें मूँदी। अमीन ने भी!!

शीशा मारा अमीन को चोट आई शशि को।

घर में चिराग़ जलाया मगर कुल का दीपक बुझाया!!

× × ×

दादू अमीन को घर में लाया। अमीन होश में आया। मगर १०५ बुखार। शशि ने अपना ताप उसको क्या दिया? अमीन बक-बक करता था।

"आया शशी! अरे! ऐसी जल्दी क्या करता है? अब्बा से कह कर आता हूँ। अम्मी से कह कर आता हूँ। क्या वह पंछी भी ले आऊँ? मजा आयेगा!"

अन्न न पानी!

तीसरा रोज। सुबह-सुबह अमीन भी शशि के पास गया। साथ-साथ वह पंछी भी। आखिरी शब्द थे उसके "शशी! मैं आ…या पंछी…को भी साथ ले……कर!"

× × ×

दादू ने अमीन की कब्र के पास उस पंछी की भी कब्र बांधी। अमीन के माथे पर शशि की चिता की राख लगाई। वह उस कब्र के स्थान पर जा बैठता है। आँसू गिराता है!

कोई कहते हैं दादू! तू हरदयाल पर मुकदमा कर। चालान कर!!

मेरे अमीन ने अपने जिस दोस्त के लिए जान दी उसके बाप पर मैं चालान करूं? मैं अमीन को कौन मुँह दिखाऊँ? हरदयाल का बच्चा मरा वह क्या कम सजा है? दुनिया देखे मुसलमान में भी

नेक आदमी है !

× × ×

आजकल उस गाँव के लड़के लड़कियाँ उस कब्र पर जाते हैं। बूढ़े दादू से पूछते हैं दादू दादा ! दादू दादा !! हमें अमीन शशि की कहानी सुनाओ न !

दादू की आँखें रोती हैं। जबान कहानी सुनाती है।

लड़के लड़कियाँ मन ही मन कहते हैं हिन्दुओं के पुराण में हजारों कहानियाँ हैं जिसे मुसलमान भाई नापाक समझते हैं मुसलमानों के कुरान में कितने ही किस्से हैं उसे हिन्दू अपवित्र समझते हैं। हम उन दोनों को छोड़ कर अपने जीवन में ऐसी बातें करें कि जिसकी कहानियाँ हिन्दू मुसलमान ही नहीं मानवी समाज, संसार का बच्चा-बच्चा सुनें। प्रेम से आँसू बहायें। खुशी से हँसें। और शान से सर ऊँचा करें !

× × ×

विश्राम....

कुन्दनलाल ! वह एक जमीन्दार था। महाजनी भी करता था। गरीबों से खूब सूद लेता था। किसानों से खंड लेता था, बेगार लेता था। गोया लोगों का खून चूसता था।

उसके पास रुपया पैसा खूब था। सोना चाँदी था, मकान थे, दूकानें थीं, कोठियाँ थीं, नौकर चाकर थे, बाग बगीचे थे। बड़े बड़े लहलहाने वाले खेत थे, जानवर थे। दरवाजे पर घोड़े बांधे जाते थे, मोटर खड़ी रहती थी, गायें थीं, भैंसें थीं, दूध का दरिया बहता था।

उसके पास सब कुछ था मगर नहीं था उदार हृदय। वह जीता था खुद के लिये। दूसरों के जीवन की कल्पना तक नहीं थी उसको। उसने न किसी को मदद की है न सहायता। वह लेना जानता था देना नहीं। लेवता था देवता नहीं। जो दूसरों को देता है देवता कहलाता है और लेता है वह लेवता !

उसके घर में एक नौकर था। उसका नाम था विश्राम। मगर उसके लिये विश्राम-आराम—हराम था। दिनभर काम करना पड़ता था उसको। सब कुछ वही करता था। बिना आराम के काम से वह क्षय का शिकार होने जा रहा था।

दुहना विश्राम का काम। गाय भैंसों का गोबर उठाना विश्राम का काम। कपड़े धोना, बर्तन मांजना, झाड़ू लगाना, पानी भरना, खेतमें खाद डालना, सब कुछ उसी का काम था। सुबह सुबह बिस्तर उठाकर झाड़ू लगाने से रात को झाड़ू लगा कर बिस्तर बिछाने तक सभी काम उसको करना पड़ता था।

उसको तनख्वाह मिलती थी वार्षिक तीस रुपये और खाना कपड़ा।

खाना ! कभी, बचा खुचा जूठन सा खाना और पुराने फटे कपड़े उसके नसीब आते थे। खेती भर काम और चुटकी भर दाम।

विश्राम का बूढ़ा बाप ! बेचारा वह भी काम करता था। मजदूरी करता था, बोझा ढोता था। "थक जाता है बेटा !" रात को थक कर जब विश्राम घर आता तो उसका बूढ़ा बाप कहता उसकी पीठ पर अपना खुरदरा हाथ फेरते "गरीब बाप के घर तू न पैदा हुआ होता ? गरीबों को अपने पसीने की रोटी खानी पड़ती है।" यह सुन कर विश्राम का दिल खट्टा होता। "बाबा !" विश्राम कहता "आप के मीठे शब्द सुनकर मुझे फुर्ती आती है। क्या करूँ मैं ? आप बूढ़े हुये हैं। मालिक तनख्वाह नहीं बढ़ाता। बुढ़ापे में भी आप को काम करना पड़ता है। आराम हराम है। क्या मैं कानपूर जाऊँ ? वहाँ मिल में काम करूंगा। चार पैसे ज्यादा मिलेंगे। आप को भेज दूंगा मैं डाक से।"

"ना बेटा !" वह बूढ़ा बाप कहता "हमें नहीं चाहिये वह मिल और वह मिलकत ! वहाँ क्या ऐसी खुली हवा मिलेगी ? यह लहलहाता खेत ? यह परिन्दों का चहकना ? न रहने की अच्छी जगह न प्यार का साथी। दो घन्टे ज्यादह काम करेंगे हम, रूखी सूखी खायेंगे, मगर रहेंगे यहीं ! शहर में जाने का नाम न लो बेटा ! इस बूढ़े बाप की कसम है तुझे अगर ऐसी बात सोचोगे तो। तुम दोनों यहीं रहो।"

"सगुणा !" वह बूढ़ा कहता बड़े वात्सल्य से "गुणों की खान शहर में ले जाकर क्या तू उसकी मिट्टी पलीद करेगा ? शहर में गरीब इज्जत के साथ नहीं रह सकता। कितनी लालच, कितने व्यसन। शहर का मज़ा मानो मौत का मुसकान यही रह। यहाँ की रूखी सूखी वहाँ की चिकनी चुपड़ी से कहीं अच्छी है। नहीं जाओगे न कानपुर या लखनऊ ? यहीं रहेगा न ? हाँ कह।" बूढ़ा अपने बेटे से कबूल करवाता था।

सगुणा-विश्राम की लाड़ली रानी। वह भी पीसने जाती थी। कई

घरों की मजूरिन थी वह। विश्राम के मालिक के यहाँ वह पीसने जाती थी। धान कूटने जाती थी। मगर वहां जाना उसको नहीं भाता था। अगर उसको वहां जाना नहीं भाता था तो जाती क्यों? अगर कहीं मालिक नाराज हुआ तो? स्वामी का काम न जाएगा? मजबूर थी बेचारी।

वह उठती थी पौ फटने के प्रथम। घर में झाड़ू लगाती थी। बर्तन मांजती थी। रोटी सेंक कर बूढ़े को खिलाती थी। विश्राम भी एकाध रोटी खाता था। विश्राम के साथ उसकी रानी भी खाती थी। इस प्रकार प्रेम की रोटी खाकर मज़दूर राजा रानी मज़दूरी करने जाते।

अभी सगुणा के बच्चे नहीं हुए थे। उसका कुनबा छोटा सा था फिर भी तंगी थी। साल के तीस रुपये कहां तक पुरते थे?

"आज कल मेरा माथा दर्द करता है।" एक रोज कहा सगुणा ने अपने राजा से "दिन भर काम करती हूँ। मगर मैं जानती हूँ मैं कैसे काम करती हूँ। आज खूब दर्द होता है, माथा ठनकता है!"

"तुझे पित्त हुआ है।" विश्राम ने कहा "मगर दूध कहाँ मिलेगा हम ग़रीबों को? कोई दवा है दूध में लेते हैं। मगर मैं दूध कहाँ से लाऊँ? ग़रीबों को कभी बीमार नहीं होना चाहिये। बीमार पड़ने का ठेका है अमीरों का। समाज की संपत्ति वह लेते हैं तो बीमारी भी उन्हीं को लेनी चाहिये। उनके पास पैसे हैं, नौकर चाकर हैं। हम ग़रीबों को बीमार होकर कैसे चलेगा? कल तू काम पर मत जा!"

"काम छोड़कर कैसे चलेगा?" सगुणा ने कहा "ग़रीबों के लिये काम ही जान है। ग़रीबों का काम छोड़ना जान छोड़ना है। उनके लिये आराम हराम है। देखो पिता जी इतने बूढ़े होने पर भी कैसे काम पर जाते हैं। मैं तो अभी जवान हूँ। काम नहीं छोड़ने की मैं। चुपचाप बैठी रहने को शरमाता है जी। हाथ पैर मज़बूत हैं मेरे। मगर माथे में दर्द होता है।"

"अगर घर में तेल होता तो तेल लगाता मैं।" विश्राम ने कहा

"अच्छा ऐसा ही दबाता हूँ मैं। दबाऊँ न ?"

"तुम दिन भर श्रमते हो, दमते हो।" सगुणा ने कहा "संकोच होता है तुमसे कहने को, धीरज नहीं होता !"

विश्राम सगुणा का माथा दबाने लगा। उसके हाथ में काम करते करते एक फोड़ा उठ आया था। सगुणा ने उसको महसूस किया। वह अपने राजा का हाथ हाथ में लेकर कहने लगी। "कितना बड़ा फोड़ा है। क्या हुआ ?"

"साहु जी के घर उस रोज मेहमान आये थे" विश्राम कहने लगा। मेहमानों को दावत दी गई। लकड़ी तोड़ने का काम मुझे दिया गया। लकड़ी तोड़ रहा था। तोड़ते-तोड़ते हाथ टूटा। हाथ में छाले पड़े। रोज पानी लगता है। मिट्टी लगती है। राख लगती है। सूज गया है। अभी अच्छा होगा।"

माथा दुखता था सगुणा का, मगर दर्द महसूस कर रहा था विश्राम! और हाथ में छाले पड़े थे विश्राम के; आँसू आते थे सगुणा की आँखों से। कष्ट के दिनों का प्रेम अधिक चिरस्थाई होता है। उन दोनों में इतना प्रेम था गोया दो शरीर और एक आत्मा!

"सचमुच तुम्हें उनके घर खूब काम करना पड़ता है।" सगुणा सहानुभूति की आवाज में कहने लगी।" मैंने वहाँ पीसते हुए देखा। तुम आंगन खोद रहे थे। हाथ ऐसा सूजा हुआ था। कुछ सुस्ताया बस कुत्ते से दौड़ आये तुम पर निर्दय! निर्मोही। जरा मुझे यह बता अमीरों को गरीबों पर दया क्यों नहीं आती? मुझे रोना आता है किसी को कष्ट में देख कर।"

"और तुम्हें बराबर पीसते देख मुझे आँसू आते थे!" विश्राम ने कहा यह दुनिया का रिवाज है कि एक रोये और दूसरा हँसे! दुनिया ढोंगी है। जो काम नहीं करता उसको अमन और आराम सब कुछ मिलता है और जो श्रमता है दिन रात उसको कुछ भी नहीं! रोटी भी नहीं मिलती। न जाने भगवान को यह अन्याय कैसा भाता है।"

"विश्राम के हाथ सगुणा का माथा दबा रहे थे। जबान बोलती थी। आँखें आंसू बहाती थीं।" "अब कैसा है तेरा दर्द?"

"अब कुछ आराम है तुम सो जाओ!" सगुणा ने कहा।

"कल मैं साहू जी से थोड़ा दूध मांग लाऊँगा।" विश्राम ने कहा।

"वे नहीं देंगे!" सगुणा ने कहा "अमीर अमीरों को देते हैं गरीबों को क्या देंगे? तुमने कभी अमीरों को ग़रीबों को दावत देते देखा है?"

दूसरे रोज सगुणा का माथा और दुखने लगा। फिर भी वह काम करने गई। विश्राम भी काम करने गया। बूढ़ा नहीं गया। वह घर में ही आंगन के पास वाले पेड़ों को खाद देने बैठा। काम का शरीर। काम की आदत। बिना काम के अच्छा नहीं लगता।

विश्राम सोचने लगा "आज थोड़ा सा दूध ले आऊँगा मैं!" साथ साथ एक छोटी लुटिया भी लाया था वह। मगर उसकी इमानदारी कहती थी उससे "चोरी मत कर। बिना मालिक की इजाज़त के कोई चीज़ घर ले जाना चोरी है।" साथ साथ दूसरा अंतरमन कहता था "चोर कौन? गाय भैंस की सेवा कौन करता है? उनका गोबर कौन उठाता है? उनको दाना सानी कौन डालता है? उनका दूध कौन दुहता है? उनकी झोंपड़ी कौन साफ़ करता है? जो उनकी सेवा करता है वही उनके दूध का सच्चा हकदार है। जो बिना सेवा के खाता है वह चोर है। उन जानवरों का कितना प्रेम है मुझपर? मेरी आवाज़ सुनकर रंभाती हैं वह। मुझे पास देखकर बदन चाटने लगती हैं। मैं उनपर प्रेम करता हूँ वह मुझपर मुहब्बत करती हैं। उनके दूध पर क्या मेरी सत्ता नहीं? उनका दूध ले जाऊँ तो क्या चोरी होगी? मैं ही दूध का सच्चा मालिक हूँ!" दिन भर विश्राम के मन में झगड़ा था। वह यह तय कर रहा था, चोर कौन मैं या साहु जी!

शाम का समय। विश्राम ने दूध दुह लिया। सारे जानवरों का दूध दुहते दुहते उसकी अंगुलियाँ दुखने लगीं। इतने दूध में से पाव भर

दूध लेने से क्या चोरी होगी ? नहीं हरगिज नहीं। विश्राम ने लुटिया भर दी दूध से। वहीं छिपा कर रख दी। उसने प्रार्थना की भगवान से क्षमा कर! मैं चोरी कर रहा हूँ। सगुणा की तबीयत साफ होगी तो नहीं करूँगा! अगर यह चोरी है, गुनाह है, तो क्षमा कर तू सर्व व्यापी है!"

रात का सभी काम हुआ। वह घर को चला दूध की लुटिया लेकर। बार बार वह लुटिया छिपाता था "कोई देखेगा तो नहीं ?" वह घर आया। सगुणा अपने राजा की राह देख रही थी। "यह दूध ले!" विश्राम ने कहा "दो रोज़ गरम गरम दूध पी। माथा उतर जायेगा!"

"क्या आज मालिक ने दूध दिया ?" सगुणा ने कहा "पत्थर कैसे पसीजा आज ?"

"तू गरम कर!" विश्राम ने कहा।

सगुणा ने दूध गरम किया। "सभी दूध मैं अकेली-अकेली क्यों लूँगी ?" सगुणा ने कहा "पिता जी को दो, दो घूंट, तुम थोड़ा लो!"

"बीमार है तू!" विश्राम बोला "हम नहीं लेंगे।" पाव भर दूध है सारा! "मगर वह कहाँ की सुनती है ? उसने बूढ़े को थोड़ा सा दिया गरम गरम दूध। "कहाँ का दूध है बिटिया!" बूढ़े ने पूछा।

"मालिक के यहाँ से लाया था थोड़ा सा!" विश्राम ने कहा "रोज इसका माथा ठनकता है!"

"मुझे क्यों देती है री!" बूढ़े ने कहा "तुम जवान हो। तुम्हें ज्यादह रोज जीना है। मैं बूढ़ा, चन्द रोज का मिहमान। मुझे क्या करना है दूध पीकर ? मगर सगुणा और विश्राम के आग्रह से घूंट भर दूध लिया बूढ़े ने। "तुम थोड़ा लो" सगुणा ने विश्राम से कहा। विश्राम ने इन्कार किया। "मैं अकेली सब दूध पी जाऊँ!" सगुणा ने मुसकराते हुए पूछा। विश्राम ने "हाँ!" कहा। "सच ?" सगुणा ने आँखे मटकाते हुए कहा "मैं पी जाऊँगी!" "पी जा!" विश्राम ने कहा

"मेरी आँख नहीं लगेगी !" सगुणा ने दूध पी लिया। दोनों सो गये।

इसी प्रकार कुछ रोज चला। एक रोज विश्राम दूध ला रहा था। रास्ते में दूसरा नौकर मिला विश्राम से। "क्या ले जा रहा है विश्राम छिपाते-छिपाते ?" उसने पूछा।

"दूध !" विश्राम ने जवाब दिया।

"आज बड़ा उदार हुआ मालिक !" उसने कहा

"दवाई के लिये ले जा रहा हूँ !" विश्राम ने कहा।

उसे नौकरी नहीं मिलती थी। उसे विश्राम के गृह सौख्य का डाह था। गरीबों में ईर्षा होती है, द्वेष होता है। डाह होता है। दो रुपये पाने वाला पांच रुपये पानेवाले का द्वेष करता है। सारी दुनिया द्वेष से भरी है। चारों ओर विकारों का साम्राज्य। क्या बड़ा क्या छोटा। क्या गरीब क्या अमीर ! सभी विकारों के आधीन ! वह जानता था कुन्दन लाल कितना कंजूस है। पीछे से हाथी भले जाय सामने से चींटी नहीं जा सकती। विश्राम दूध चुरा लाया है। वह अब सब बातें साहु कुन्दन लाल से बताएगा। विश्राम की नौकरी जाएगी वह खुद उस जगह पर काम करेगा। कम से कम दो बार रोटी तो मिलेगी ? और है सभी अपने हाथ में ! वह सोचता हुआ चला।

बुरी बात करने में देर नहीं लगती जैसे अच्छी बात करने में देर लगती है। वह ईर्षालु आदमी कुन्दन लाल के घर गया। उसने खूब मिर्च मसाला लगाकर काना फूंसी की। "आप विश्राम को क्यों काम पर रखते हैं ! वह रोज दूध चुरा कर ले जाता है। मुझे रखिये काम पर ; दो रुपये कम ही दीजिये। मैं अपना भाग्य समझूँगा।" चटपटी बातों से मीठी खुशामद भी की।

"अच्छा ! देखा जाएगा।" कुन्दन लाल ने कहा "इस समय मैं काम में हूँ !"

साहुजी दिल के दुष्ट उसमें यह जहर पड़ा। कड़वी नीम पर कुनीन का अर्क सा हुआ। उसने विश्राम की राहपर पहरा करने का

तय किया। रात कब होगी। मैं कब चोरी पकड़ूँगा। चोर को क्या सजा दूँगा। यही सोचता रहा दिन भर।

विश्राम मालिक की इजाजत लेकर दूध की लुटिया छिपाते घर को चला। उनके पीछे यह काला नाग था ही। कुछ दूर जाने पर उन्होंने सांप की तरह विष वमन करते हुए विश्राम को पकड़ा। "बदमाश!" हम समझते थे विश्राम इमानदार है। अच्छी इमानदारी है यह। लूट मचा रखी है। "ठहर अभी हड्डी नरम करता हूँ। पुलीस के हवाले करूंगा। समझा क्या है!" न जाने क्या क्या बकते थे। अमीरों की जबान कभी काबू में रही है?

"साहु जी!" विश्राम गिड़गिड़ा कर बोला। "आप ही का तो खादिम हूँ? आपका ही खाता हूँ। घर वाली बीमार है। सात रोज दूध के साथ दवा लेनी है। आज चौथा रोज है हुजूर। हम गरीब······।"

"गरीब है तो अपनी बला से!" कुन्दन लाल जी कड़ककर बोले "हमने क्या सभी गरीबों को दूध देने का ठेका ले रखा है?"

"मगर मैं आप ही का न हुजूर?" विश्राम ने कहा दया·····।

"खामोश!" कुन्दन लाल ने कहा हरामखोर कहीं का। घर में बच्चों को चाय, खीर, दलिया, दही सब में दूध लगता है वह क्या तेरा बाप ला देगा? अभी पुलीस के हवाले करता हूँ! क्या समझ रखा है?·········इसी प्रकार न जाने क्या क्या अंट संट बकने लगे।

ठहर···कुछ देर रुककर बोले "पहले तेरे बाप के पास ले जाता हूँ। कहता हूँ देख तेरा नालायक कपूत। चल!"

गमगीन विश्राम आगे आगे जाता था। पीछे पीछे कुन्दन लाल।

घर में बूढ़ा बाप और जवान बीबी उसकी राह देख रहे हैं। सगुणा की दाहिनी आँख फड़कती है। कहीं कुछ अमंगल तो नहीं हुआ आज? बूढ़ा कहता है "आज खूब रात हुई! अभी नहीं आया।"

सगुणा कहती है "उनके यहां काम खूब। कोल्हू के बैल की तरह काम करना पड़ता है!"

"कल से काम करने की कोई जरूरत नहीं!" कुन्दन लाल की आवाज "चोर को कौन काम पर रखता है!" वह दरवाजे पर आकर चिल्लाये।

बूढ़ा अचरज से देखता ही रहा। "अच्छा! बिटिया जरा चारपाई ठीक कर यह! उसने सगुणा से कहा "बिराजिये साहुजी इतनी रात और इस गरीब की झोपड़ी में!!"

"बस कर यह नखरे!" कुन्दन लाल ने कहा "तेरा विश्राम चोर है, बदमाश है। वह रोज दूध चुरा लाता है। तूने भी मुझे वाकिफ नहीं किया। तू भी उसमें शरीक है! यह देख दूध की लुटिया। आज दूध कल अनाज और इसी प्रकार बच्चों के गहने भी उड़ा लाएगा यह! इसे अब पुलीस के हवाले करूंगा।" कुन्दन लाल अमीरों की शान में बातें कर रहे थे। पड़ोस के लोग भी इकट्ठे हुए थे। सभी तमाशा देख रहे थे।

विश्राम मारे शरम के गड़सा गया। सगुणा अन्दर जाकर रोने लगी। सभी महाभारत की जड़ मैं हूँ। बूढ़ा भी शरम से अधमरा हुआ था। आखिर वही बोला "चोरी का दूध मुझे पिलाया, जहर क्यों नहीं पिलाया? क्या कभी तेरे खानदान में ऐसा किया था किसी ने! इस बुढ़ापे में मैं यह काला मुँह कैसे दिखाऊँ? तेरी घर वाली बीमारी से मर जाती तो क्या जाता? कुल को कलंक नहीं लगता! अरे! पसीने की रोटी नहीं मिलती है तो भूखा मरेंगे मगर शरीफ कभी चोरी नहीं करेंगे, चोरी कर खाने के बजाय भूखा मरना अच्छा! साहूजी! इन सफेद बालों पर दया कीजिये। पुलीस के हवाले मत दीजिये। इतनी बेइज्जती हुई वह खूब हुई!" वह उदार दिल का बूढ़ा इस कंजूस का पैर छू कर बोला।

"अच्छा!" कुन्दन लाल ने कहा "एक बार मुआफ करता हूँ।

मगर कल से काम पर नहीं रखूँगा इसे। पता नहीं कब क्या करेगा। सांप कौन पालता है अपने घर में ?" वह अपनी लकड़ी से यहाँ वहाँ के पत्थर पीटते चला।

आँगन में विश्राम आँसू बहा रहा था। बरामदे पर बूढ़ा सचिन्त बैठा था। अन्दर सगुणा रो रही थी। कुन्दन लाल घर जा रहा था। रात काफी हो चुकी थी। "फुस !" आवाज कर आगे फनियर नाग आया और कुन्दन लाल को डस गया। "बचाओ ! बचाओ !" सांप.........साँ.........प.........कुन्दन लाल की आँखें सफेद हुईं। कुछ लोग साँप को देखने लगे तो कुछ वैद्य को बुलाने गये। कुछ लोग कुन्दन लाल को उठा कर विश्राम के घर में लाये। नाग नहीं पाया गया। किसी ने कहा "मुर्गी लगावो !" इतने में विश्राम ने क्या सोचा कौन जाने। वह आगे आया ! झुक कर कुँदन लाल का जखम चूसने लगा। पूरा जहर चूस लिया उसने।

"यह क्या करता है बेटा !" बूढ़ेने कहा। सगुणा मुँह खोल कर भी खामोश हो गयी।

"कुलको लगा हुआ कलंक धो जायेगा पिता जी !" विश्राम ने कहा " पाप का प्रायश्चित कर रहा हूँ !"

विश्राम जहर चूस कर थूकता जाता था। कुँदन लाल का चीखना बंद होने तक वह ऐसा करता रहा। मगर यह क्या विश्राम एकाएक बेहोश हुआ। हाँ उसका होंट फटा था। जहर ने उस पर असर किया।

सगुणा चीख कर जमीन पर गिर पड़ी पछाड़ खाकर। क्या वह विधवा होकर जीयेगी ? बूढ़ा बच्चे की तरह रोने लगा। कुन्दन लाल के घर वाले डोली लाये थे उसे घर ले जाने के लिए। वे जरा खुश से नज़र आये।

कुन्दन लाल के प्राण आ रहे थे। और विश्राम के जा रहे थे। उसके मुँह से झाग आ रहा था। सगुणा ने उसका सर अपनी गोद

में लिया था। अँगुली से झाग पोंछ रही थी। लोग उपचार कर रहे थे। बूढ़ा सिसक सिसक कर रो रहा था। सगुणा में धीरज था। निष्ठा थी, श्रद्धा थी। सत्य का ऐसा अंत कभी होगा? वह कहती थी "भगवान क्या निष्ठुर है? आप रोते क्यों हैं?" कोई कहते थे "आपके लौंडे ही अजीब हैं। अपने को जान बूझ कर खतरे में डालने से न जाने उनको क्या मजा आता है!" कोई कहता "बापने गुस्सा किया उसने मरना बेहतर समझा!" "अरे बुढ्ढ! तेरे शब्दों ने ज़हर का काम किया।" बूढ़ा क्या बोलेगा? "मैंने तेरे पति को मारा। मैंने तुझे विधवा किया!" वह पागल सा बकने लगा। सगुणा उसको सान्त्वना देने लगी।

रात बीती। अन्धेरा गया। मगर सगुणा के घर में अंधेरा ही था। बूढ़े के दिल में कालिख थी। सगुणा सावित्री के निश्चय से बैठी थी। "उनके प्राण आयेंगे या मेरे जायेंगे!" उसकी गोद में विश्राम का मस्तक था। कोई कुछ कहता तो कोई कुछ। सगुणा में किसी का ध्यान नहीं था। गोया उसके प्राण भगवान की शरण में गये थे विश्राम के प्राणों की भीख मांगने।

देखो एक भील का लड़का आया। हाथ में तीर कमान है। काला काला धोया हुआ कोयला! मगर उसका शरीर कैसा गठीला है। और आँखें? गोया चमकने वाले बिजली के बल्ब! नाक तो देखो तोते की चोंच! चेहरा कितना सतेज? पहना है एक भद्दी सी लंगोट। बदन पर कपड़ा तक नहीं। हाँ भाई जिसका बदन बेडौल है तोंद निकल आई है वह अपना भद्दापन छिपाने को कपड़े पहने! सुडौल बदन को कपड़े की क्या शोभा?

"अरे!" किसी ने पूछा "सांप की दवाई भी जानता है?"

"दवा की क्या बात?" उसने पूछा "किसको काटा है?" लोग उसको विश्राम के पास लाये। उस लड़के ने क्षण भर विश्राम की ओर देखा। उसकी आँखें देखीं। दौड़ता हुआ जाकर एक जड़ ले आया।

वह जड़ विश्राम की नाक के पास पकड़ी। विश्राम उसकी खुशबू लेने लगा। सगुणा भगवान की प्रार्थना करती थी।

"अरे वह देख विश्राम ने करवट बदली।" "अब वह अच्छा होगा।" दुनिया में न जाने कैसी कैसी वनस्पति हैं।" एक से एक बात करने लगा।

"अब वह अच्छा होगा।" उस लड़के ने कहा "इसी तरह उसे आराम करने दो जरा!" वह बाहर गया। बस हवा हो गया। तूफान सा आया बवंडर सा गया।

"अरे!" लोग उसके जाने के बाद बात चीत करने लगे। कौन जड़ दी उसने। जरा लेकर रखते तो?" "जा देख जरा वह लड़का कहाँ है!" अरे वह भील लड़का कहाँ गया? बच्चे दौड़ पड़े कोई कहता था इस ओर गया कोई कहता उस ओर! मगर किसी को पता नहीं लगा वह आया कहाँ से और गया कहाँ?

सगुणा अब होश में आई। विश्राम गोया सो गया था। सुबह की दुपहर हुई शाम हुई। सगुणा ने पानी भी नहीं पिया था। गायें घर आने लगीं। पंछी घोंसले की ओर उड़े। विश्राम के प्राण भी उसकी कुडी में आये। देखो विश्राम ने आँखें खोलीं। देखो कैसे देखता है वह सगुणा की ओर गोया उसको दिल में उतार रहा है आँखों की राह से!

"होश आये!" सगुणा ने कहा।

बूढ़ा विश्राम के पास आया। विश्राम के बालों पर हाथ फेरा। "माफ कीजिये पिता जी!" विश्राम ने कहा अपने पिता जी से "मुझपर ख़फ़ा मत होइये।"

"जा बेटा!" बूढ़े ने कहा "भगवान की कृपा है तू फिर से मुझे मिला। बुढ़ापे का आसरा, सगुणा का तप का फल मिला! सगुणा! उठ बिटिया। घर में पानी नहीं। चूल्हा जला! रोटी सेक बूढ़े। ने विश्राम का माथा अपनी गोद में लिया। सगुणा! गृह लक्ष्मी गृह

कृत्य में लगी।

भोजन के बाद विश्राम को कुछ अच्छा मालूम हुआ। "मैंने एक सपना देखा।" विश्राम ने कहा सगुणा से।

"क्या देखा?" सगुणा ने पूछा।

"मैंने देखा! तू अपने प्राण देकर मेरा प्राण ले रही है! तेरी पुण्यायी है!"

"मेरा कैसा पुण्य?" सगुणा ने कहा "मेरे लिये तो यह सब हुआ। अगर मैंने माथा दुखने की बात नहीं कही होती तो क्या इतनी बातें होतीं? मैं कभी ऐसी बात कहूँगी भी नहीं।

"तो मुझे क्यों जिलाया तूने?" विश्राम ने कहा अगर तू अपने सुख दुःख की बात मुझ से नहीं कहेगी तो मेरा जीना किस काम का?

"यह क्या बोलना हुआ!" सगुणाने कहा "मैं कहूँगी सब। मगर भूखी रहूँगी। न वह अमीरों के घर का दूध लूंगी न वह अपमान सहूँगी। अमीरों के घर का दूध भी जहर से बदतर है!!"

"अच्छा! अच्छा!!" विश्राम ने कहा "मैं भी नहीं लाऊँगा हुआ न!"

आदमी एक बार भूल करता है बार बार क्या भूल करता है।

बार बार भूल करेगा तो उसे आदमी कौन कहेगा? जानवर ही तो नहीं कहेंगे सब!

× × ×

वहां कुन्दन लाल भी होश में आये। रात भर सोचते बिताई उसने अपने नरम नरम बिस्तरे पर। विश्राम के त्याग का उसपर अजीब असर हुआ था। मैं कितना कमीना कितना खुदगर्ज! वह मन में सोचता जाता था। सच पूछो तो चोर मैं हूँ। मैं क्या काम करता हूं जो काम नहीं करता वह चोर है।' मुफ्त खोर है। मैं झूठे कागज बनाता हूँ। अदालत झूठे मुकद्दमें लड़ता हूं। चोर मैं हूं। गाय भैंस का मैं क्या करता हूँ? विश्राम ही उनका सब करता है। वह विश्राम

कौही हैं। सच्चे चोर हम हैं। महा चोर !......

न जाने वह क्या क्या सोचने लगे। विचार विकार और भावनाओं का तूफान था उसके दिल में।

चार रोज बीते। एक रोज रात को कुन्दनलाल विश्राम के घर आया बूढ़ा अंदर अंगीठी के पास बैठा हुआ था। मालिक को देखते ही विश्राम ने चारपाई लगाई। बूढ़ा भी उठ आया।

"इतनी रात को कहाँ आये ?" बूढ़े ने पूछा "टॉर्च तो लाया हूँ ? सेहत कैसी है ?"

"जी !" कुन्दन लाल ने कहा "आप की कृपा से कुशल हूँ। आप के विश्राम ने अपनी जान की बाजी लगाकर मुझे बचाया। विश्राम भैया मैं कभी नहीं भूलूंगा तेरे उपकार !"

"उपकार कैसे हुजूर !" विश्राम ने कहा "आप ही की रोटी से यह देह पली है ? आप के काम आया बस धन्य हुआ। इस प्रकार की बातों से हम गरीबों को क्यों शरमाते हैं ? हमारे प्राणों की क्या कीमत जहर उतारने के लिए मुरगी नहीं लगाते हैं ? वैसे ही हम ?"

"विश्राम भैया !" कुन्दन लाल ने कहा "ऐसा मत कहो भैया ! तुम्हारा कहना सच है। हमारे लिए गरीबों की जान हमारे घर के कुत्ते बिल्ली, तोता तीतर से बेशकीमती नहीं ? हम तुम्हारे परिश्रम पर जीते हैं, बढ़ते हैं। मगर तुमको कुचलते हैं। खेत के खाद की तरह तुम अपने बलिदान से हम सफेद पोशों को हँसाते हो, खिलाते हो। तुम्हारी कजा ही हमारा मजा है। अगर तुम श्रमना छोड़ दो हम कहीं के नहीं रहेंगे। मैंने तुमको चोर कहा। सच्चा चोर मैं हूँ विश्राम ! क्षमा करो मुझे। करोगे न क्षमा ? हाँ कहो ! कहो हाँ !!"

"जाने दो साहू जी ! " बूढ़े ने कहा "आप इतना बुरा मत मानिये !"

"क्षमा कीजिये हुजूर !" विश्राम ने कहा "हर एक का अपना-अपना स्थान है। हमें अपने स्थान पर रहने दीजिए !"

"हाँ ! मैं भी वही कहता हूँ !" कुन्दन लाल ने कहा। हर एक का अपना-अपना स्थान है। उसको अपना स्थान मिलना ही चाहिये। श्रमने दमने वाले को समाज में सर्वोच्च स्थान मिलना चाहिये। अगर संसार फूला फला है तो तुम परिश्रम वालों के पसीने से। संसार में तुम्हारी पूजा होनी ही चाहिये। तुमने महज मेरे शरीर से सांप का ही नहीं मगर कृपणता, दुष्टता, अहंमन्यता, वगैरह का जहर भी जो सारे जीवन भर मेरे शरीर में भरा हुआ था सोख डाला विश्राम ! विश्राम ! मैं प्रथम जहरीला सांप था आज तुमने निर्विष किया है। तुमने महज जीवन नहीं जीवन की ओर देखने की दृष्टि दी है। तुम्हारे उपकार अनंत हैं। मेरी सभी संपत्ति तुम्हारी है। तुम आकर मेरा घर संभालो।

"क्या विश्राम फिर आप के घर काम करने जाएगा ?" बूढ़े ने पूछा।

'मगर आप के घर से दूध वगैरह नहीं लाएगा वह ?" सगुणा ने कहा।

अब दूध वगैरह मेरा नहीं विश्राम का है। जो श्रमता है उसका है। वे देंगे तभी हम खायेंगे। विश्राम भैया ! अब तुम नौकर नहीं मेरे भाई हो। तुमने मेरा उपकार किया। मुझे नवजीवन दिया।"

"भगवान की कृपा ?" विश्राम ने कहा—कुन्दन लाल घर गया। अब विश्राम कुन्दन लाल के घर जा कर काम करता है, श्रमता है। दमता है। तपता है। खपता है। घर के सभी उसपर प्रेम करते हैं। मगर वह श्रम पर प्रेम करता है। जो श्रम पर प्रेम करता है सभी उस पर प्रेम करते हैं। भगवान भी उसी पर प्रेम करता है। हम भी श्रम पर प्रेम करें।
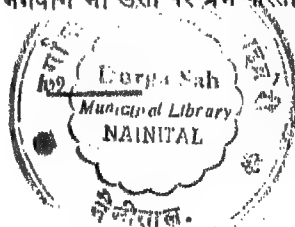
लेखक की अन्य रचना

सती (उपन्यास)

सती एक सत्य कथा की नींव पर खड़ी हुई सुन्दर कलाकृति है। इस कलाकृति में घटनात्मक सत्य के साथ संयम का शिवत्व जुड़ा हुआ है। और उस पर कलाकार ने भावनात्मक सौंदर्य का पुट चढ़ाया है। इस प्रकार सती में सत्यम् शिवम् सुन्दरम् का सुन्दर समन्वय साधा है।

विवाह दो दिलों का होता है काया का नहीं। विवाह आत्मा का मिलन है। विवाह अर्द्धतावस्था की पहली दशा और उसका अंतिम स्वरूप है। विवाह का अर्थ है मनुष्य का अर्ध नारी नरेश्वर बनना। पर आज विवाह को हम "शरीर संबंध" कहते हैं। आत्मा के मिलन के स्थान पर शरीर का मिलन होने लगा है। पहले विवाह प्रेम का मूर्त स्वरूप था आज वह काम की पूर्ति का साधन मात्र है। काम को प्रेम मानकर महिला को कामिनी समझने लगे हैं।

स्त्री शक्ति है। वह शक्तिदात्री भी है। शक्ति की जिस रूप में पूजा की जाती है वह उसी रूप में दर्शन और प्रसाद देती है। भारत ने स्त्री को अबला समझा। अबला के रूप में उसकी पूजा की। इसके परिणाम स्वरूप राष्ट्र दुर्बल हुआ। आज वह स्त्री की कामिनी के रूप में पूजा करने लगा है। लेखक अपने राष्ट्र को सत्यशाली देखना चाहता है। इसलिये स्त्री के सतीत्व का दर्शन कराता है। अबला के रूप में पूजने वाला राष्ट्र निर्बल होकर आज कामिनी के रूप में पूजा करता हुआ काम का कीड़ा बना है। अगर वह सती के रूप में पूजेगा तो शक्तिशाली होगा, महिला के रूप में पूजेगा तो महान होगा और माता के रूप में पूजेगा तो मुक्त होगा। स्त्री समाज को एक हाथ से विकास और दूसरे हाथ से विनाश की ओर संकेत करती है।

सती वंदना और गोपाल का संबंध प्रेम का है काम का नहीं। और विवाह प्रेम की मूर्ति है। प्रेम संयम सिखाता है और काम स्वैरता। संयम में माधुर्य है स्वैरता में नशा। सती वंदना से प्रेम करने वाला गोपाल संयमी है यद्यपि वह युवक है और वंदना से शरीर संबन्ध करने वाला उसका पति धनाढ्य किन्तु बूढ़ा और नपुंसक है। लेखक ने इस पुस्तक में यह सुन्दरता से दर्शाया है कि प्रेम हृदय का या आत्मा का धर्म है और काम शरीर और मन का। लेखक ने पग-पग पर वंदना और गोपाल के प्रेम और संयम का दर्शन कराया है। लम्बे वियोग के बाद आया हुआ गोपाल चोर दरवाजे से नहीं मगर राजद्वार से आता है।

माता-पिता के बनाये हुए पति से उनको केवल शरीर मिलता है। शरीर से ही संबंधित रह कर हृदय से अपने बनाये हुए पति से संबंधित रहना सती की विशेषता है। सती की आत्मा शरीर से परे है। सती का प्रेम शरीर से परे है। और शरीर से प्रेम कैसे?

सती वंदना अपनी तेजस्विता के साथ अपना कर्तव्य करती है। वह अपनी आन निभाती है। लेखक ने सतीत्व का उज्ज्वल चित्र खींचा है। इस उपन्यास में जो उज्ज्वलता है, जो प्रभाव है, जो सौन्दर्य है जो कला है, जो संयम है, जो माधुर्य है वह वर्णन के बाहर है। पाठक स्वयं पढ़ लें।

सुन्दर गेटअप, सुन्दर छपाई, तिरंगा कवर, मूल्य सजिल्द केवल तीन रुपये।

प्राप्ति स्थान—

शिवाजी बुक डिपो, लखनऊ।